साहित्याकाश

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERRED MONTHLY JOURNAL

वर्ष– 1, खंड– 5, अंक– 5, मई– 2024

साहित्याकाश

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERRED MONTHLY JOURNAL

वर्ष– 1, खंड– 5, अंक– 5, मई – 2024

प्रधान संपादक

डॉ. संतोष कांबळे

पुस्तकालयाध्यक्ष,

उच्च शिक्षा और शोध संस्थान,

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, खैरताबाद, हैदराबाद

संपादक

डॉ. अजित चुनिलाल चव्हाण

सहयोगी प्राध्यापक,

वसंतराव नाईक कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय,

शहादा, जिला– नंदुरबार

सह–संपादक

प्रो. गौतम भाईदास कुवर

सह–संपादक

प्रो. सुनील गुलाब पानपाटील

कानूनी सलाहकार

एडवोकेट श्री राजेश कुमार शर्मा

अधिवक्ता, सर्वोच्च न्यायालय, नई दिल्ली

परामर्श मंडल

प्रो. अर्जुन चव्हाण
भूतपूर्व विभागाध्यक्ष (हिंदी)
शिवाजी विश्वविद्यालय,
कोल्हापुर

प्रो. सुनिल बाबुराव कुलकर्णी
निदेशक, केंद्रीय हिंदी निदेशालय,
नई दिल्ली
एवं
निदेशक,
केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा

प्रो. एस.वी.एस.एस. नारायण राजू
आचार्य एवं विभागाध्यक्ष (हिंदी)
तमिलनाडु केंद्रीय विश्वविद्यालय,
तिरुवारूर

डॉ. गंगाधर वानोडे
क्षेत्रीय निदेशक,
केंद्रीय हिंदी संस्थान,
आगरा,
(हैदराबाद केंद्र)

एम. नधीरा शिवंति
हिंदी अध्यापिका,
स्वामी विवेकानंद
सांस्कृतिक केंद्र,
कोलंबो, श्रीलंका

साहित्याकाश

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERRED MONTHLY JOURNAL

वर्ष– 1, खंड– 5, अंक– 5, मई – 2024

PEER REVIEW COMMITTEE

डॉ. अर्चना पत्की, सेलू
डॉ. लूनेश कुमार वर्मा, छछानपैरी, छत्तीसगढ़
डॉ. मिनाक्षी सोनवणे, नागपुर
डॉ. राजश्री लक्ष्मण तावरे, भूम, (महाराष्ट्र)
डॉ. मल्लिकार्जुन एन. उजीरे, (कर्नाटक)
डॉ. राहुल कुमार, झारखंड
डॉ. संदीप किर्दत, सातारा
डॉ. वनिता शर्मा, दिल्ली
डॉ. भावना कुमारी, रांची
डॉ. एकलारे चंद्रकांत, मुखेड, महाराष्ट्र
डॉ. अनामिका जैन, मुजफ्फरनगर
डॉ. मौसम कुमार ठाकुर, गोड्डा, झारखंड
डॉ. रौबी, अलीगढ़
डॉ. अमृत लाल जीनगर, पिण्डवाड़ा (राजस्थान)
डॉ. प्रकाश आठवले ऊरुण इस्लामपुर,
डॉ. राम आशीष तिवारी, छत्तीसगढ
डॉ. दीपक प्रसाद, रांची
डॉ. रामप्रवेश त्रिपाठी, देवरिया,
डॉ. परशुराम मालगे, मंगलुरू, (कर्नाटक)
डॉ. कृष्ण कुमार शर्मा, बुलंदशहर
डॉ. विजय वाघ, सेनगाँव, (महाराष्ट्र)
डॉ. रेणुका चव्हाण, नासिक (महाराष्ट्र)
डॉ. लक्ष्मण कदम, मुदखेड (महाराष्ट्र)
डॉ. ज्ञानेन्द्र कुमार, पटना
डॉ. पवार सीताबाई नामदेव इंदापुर
डॉ. टी. लता मंगेश, तिरुपति
डॉ. आशीष कुमार तिवारी, छतरपुर (मध्य प्रदेश)
डॉ. राम सिंह सैन, राजस्थान,
डॉ. गोरखनाथ किर्दत, उरुण–इस्लामपूर
डॉ. वैशाली सुनील शिंदे, सातारा
डॉ. दिनेश कुमार गुप्ता, गंगापुर सिटी
डॉ. संजीव कुमार, दरौली, सिवान
डॉ. सचिन जाधव, सिंदखेडा
डॉ. के शक्तिराज, यल्लारेड्डी, तेलंगाणा
डॉ. सुरेन्द्र कुमार, रतिया
डॉ. शीतल बियाणी, वाळूज
डॉ. नीलम धारीवाल, उत्तराखंड
डॉ. नीतू रानी, पंजाब
डॉ. सरोज पाटिल, बेतुल, म.प्र.
डॉ. सुनिल पाटिल, चेन्नई
अर्जुन कांबले, बेलगावी, कर्नाटक
ममता शत्रुघ्न माली, मुंबई
डॉ. देविदास जाधव, अर्जापूर, महाराष्ट्र
डॉ. सोनकांबले अरुण वाई,
सुषमा माधवराव नरांजे, भंडारा (महाराष्ट्र)
डॉ. श्रीलेखा के. एन., केरल
अजीति महेश्वर मिश्रा, मुंबई, (महाराष्ट्र)
वंदना शुक्ला, छतरपुर (मध्य प्रदेश)
प्रा. तेलसंग हनमंत भिमराव (महाराष्ट्र)
डॉ. मंगल कोंडिबा ससाणे, बारामती (महाराष्ट्र)

स्वामित्व : प्रधान संपादक, साहित्याकाश मासिक पत्रिका

प्रकाशक : डॉ. संतोष कांबळे

प्रधान संपादक, : डॉ. संतोष कांबळे

पुस्तकालयाध्यक्ष, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान,

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, खैरताबाद, हैदराबाद

E-mail- sahityaakash24@gmail.com

Website- https://www.sahityaakash.in

*'साहित्याकाश' में प्रकाशित रचनाकारों के विचार स्वयं उनके हैं । अतः संपादक का उनसे सहमत होना अनिवार्य नहीं है ।

**'साहित्याकाश' पत्रिका से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल हैदराबाद न्यायालय के अधीन होंगे ।

प्रधान संपादक

डॉ. संतोष कांबळे

M.A. (History, Hindi), M.Lib. & I.Sc., M.Phil., PGDCA., PGDLAN., PGDT., UGC-NET, Ph.D.-LIS., (Ph.D.-Hindi)

पुस्तकालयाध्यक्ष, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, खैरताबाद, हैदराबाद

E-Mail- shreyashju@yahoo.co.in Mobile No.- 8125981194

संपादक

डॉ. अजित चुनिलाल चव्हाण

M.A., Ph.D.

सहयोगी प्राध्यापक, वसंतराव नाईक कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, शहादा, जिला– नंदुरबार

E-Mail- chavan.ajit2@gmail.com Mobile No.- 9422262445

सह–संपादक

प्रो. गौतम भाईदास कुवर

M.A., Ph.D

हिंदी विभाग प्रमुख

पूज्य साने गुरुजी विद्या प्रसारक मंडल का कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय शहादा जिला नंदुरबार महाराष्ट्र

E-Mail- gautamkuwar53@gmail.com Mobile No.- 84118 28448

प्रो. सुनील गुलाब पानपाटील

M.A., Ph.D (SET)

कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय, नंदुरबार

E-Mail- sgpanpatil@gmail.com Mobile No.- 9860235508

कानूनी सलाहकार

एडवोकेट श्री राजेश कुमार शर्मा

B.A., LL.B

अधिवक्ता, सर्वोच्च न्यायालय, नई दिल्ली, **E-Mail- rajesh.shagun@gmail.com Mobile No.- 981144676**

साहित्याकाश

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERRED MONTHLY JOURNAL

वर्ष– 1, खंड– 5, अंक– 5, मई – 2024

अनुक्रम

अ. क्र.	साहित्याकाश वर्ष– 1, खंड– 5, अंक– 5, मई – 2024		पृ.सं.
1.	संपादकीय	डॉ. संतोष कांबळे	03–04
		'मजदूर दिवस' पर दो शब्द	
2.	लेखक	डॉ. सुषमा देवी	05–11
	शोध आलेख शीर्षक	समाज की अभिवृध्दि में भारतीय साहित्य का अवदान	
3.	लेखक	डॉ. पोपट भावराव बिरारी	12–16
	शोध आलेख शीर्षक	'सलाम' कहानी में दलित विमर्श का चित्रण	
4.	लेखक	अरुण विठ्ठल कांबळे	13–20
	शोध आलेख शीर्षक	हरिशंकर परसाई के साहित्य में सामाजिक व्यंग्य–एक अध्ययन	
5.	लेखक	सविता शं.कोल्हे एवं प्रो.डॉ.अनिता नेरे	21–26
	शोध आलेख शीर्षक	प्रवासी हिंदी साहित्य और पत्रकारिता : अंतर्संबंध	

6.	लेखक	आलीना ख़लग़ाथ्यान (ARMENIA)	27–33
	शोध आलेख शीर्षक	संत कविता की दार्शनिक पृष्ठभूमि	
7.	लेखक	डॉ. रेखा जी	34–36
	साक्षात्कार का शीर्षक	नार्वे के प्रवासी हिंदी साहित्यकार प्रवीण झा और व माया भारती से साक्षात्कार	
8.	लेखक	संदीप पांडे	37–41
	शोध आलेख शीर्षक	प्रेम की नवेली दास्तान	
9.	लेखक	हरीश चन्द्र पाण्डे	42–46
	कहानी का शीर्षक	सबक	
10.	लेखक	संदीप पांडे 'शिष्य'	47–48
	कविता का शीर्षक	क्या मुश्किल इस जीने में?	

संपादकीय

'मजदूर दिवस' पर दो शब्द ...

प्रतिवर्ष मई महीने की शुरूआत मजदूर दिवस से किया जाना मजदूर वर्ग की कड़ी मेहनत, कठोर श्रम को समर्पित है । एक मई अर्थात् 'मजदूर दिवस' पूर्ण रूपेण मजदूरों को समर्पित है जो 'श्रमिक दिवस, 'लेबर डे' 'मजदूर दिवस' एवं 'मई डे' के नाम से भी जाना जाता है । मजदूरों एवं श्रमिकों की मेहनत को सम्मान प्रदान करने के साथ–साथ उनके अधिकारों के लिए आवाज़ बुलंद करने के उद्देश्य से यह दिन मनाया जाता है । मजदूर किसी भी कार्य को संपन्न करने में अपना अहम योगदान प्रदान करता है । विश्व के बुनियादी ढाँचे के विकास में मजदूर के सराहनीय योगदान को देखते हुए इस पत्रिका का संपादन किया जाना मजदूर के कार्य को सम्मान देने के उद्देश्य से किया गया है ।

अन्य अनेक विशेष दिवसों के समान मजदूर दिवस भी मजदूर एवं श्रमिक वर्ग के लिए विशेष उमंग एवं उत्साह का दिवस है । यह दिन भारत वर्ष के विभिन्न राज्यों एवं प्रांतों में भिन्न–भिन्न नामों से मनाया जाता है, जैसे तमिल मे 'उझैपलर दीनम', मलायलम में 'थोझिलाली दीनम', महाराष्ट्र में 'कामगार दिवस' एवं कन्नड में 'कार्मिकर दीनाचरने' की संज्ञा से अभिहित यह दिवस विशेष रूप से उल्लेखनीय है । यह दिन ही नहीं बल्कि पूरा मास मजदूरों को समर्पित करने का उद्देश्य मजदूरों एवं श्रमिकों को उनके अधिकारों के प्रति जागृत करने एवं शोषण के विरूद्ध आवाज़ उठाने की मंशा से मनाया जाना उनके सम्मान का द्योतक है । प्रतिदिन आठ घंटे से ज्यादा काम करने को मजबूर करने एवं अधिकारों के हनन होने पर मजदूर को अपने हक के लिए लड़ने हेतु तत्पर होना चाहिए ।

अपने स्वास्थ्य को दाँव पर लगाकर मजदूर हर उस कार्य को संपन्न करता है जो सभी के लिए दुष्कर होता है । भवन निर्माण, सड़क निर्माण ऐसे सभी कार्यों को श्रमिक अपने श्रम द्वारा पूरा करता है तथा नवीन एवं विकसित भारत बनाने में श्रमिक एवं मजदूरों का अतुलनीय योगदान उनके श्रम को दर्शाता है । 'श्रमेव जयते' जैसे मूलमंत्र द्वारा श्रमिकों को समृद्ध देश के निर्माण में अपने योगदान का द्योतक है ।

देश की अर्थ व्यवस्था को मजबूत बनाने में इस वर्ग ने अपने पसीने को बहाया है तथा उद्योग धंधों की रीढ़ को मजबूत बनाने में इनका योगदान विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है ।

आज देश के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह किसी भी कार्य को ऊँच–नीच अथवा श्रेष्ठ या निम्न श्रेणी में न रखकर प्रत्येक कार्य को संपन्न करने वाले व्यक्ति जैसे मजदूर, किसान, श्रमिक आदि को सम्मान की दृष्टि से देखें । किसी भी कार्य को पूर्ण करने वाला व्यक्ति विशिष्ट होता है, भले ही वह किसी भी वर्ग, जाति अथवा समुदाय से संबंधित क्यों न हो । अतः प्रत्येक कार्य को सम्मान की दृष्टि से देखा जाना चाहिए । श्रमिक एवं मजदूर किसी भी कार्य की नींव रखने का कार्य बखूबी करते हैं, जिससे देश बुलंदियों को हासिल करता है अतः विशेष रूप से यह पत्रिका अपने श्रम एवं पसीने द्वारा देश को मजबूत बनाने वाले श्रमिक, किसान एवं मजदूर वर्ग के प्रति सम्मान हेतु समर्पित है । अंत में संपादक मंडल समस्त आलेख लेखक को हार्दिक आभार देता हैं, जिन्होंने अपने बहुमूल्य समय से कुछ समय इस पत्रिका को प्रदान किया ।

प्रधान संपादक

डॉ. संतोष कांबळे

समाज की अभिवृध्दि में भारतीय साहित्य का अवदान

डॉ. सुषमा देवी
असोसिएट प्रोफेसर
हिंदी विभाग
बद्रुका कॉलेज
तेलंगाना–500027
भ्रमणध्वनि: 9963590938

शोध सार :

विश्व की किसी भी भाषा के लिखित स्वरूप को साहित्य के नाम से जाना जाता है । साहित्य शब्द स्वयं में अत्यंत व्यापक अर्थ को समाहित किए हुए है । जो साहित्य शिवत्व के उद्देश्य को लेकर रचा जाय, वह उत्तम माना जाता है । इस नादमय सृष्टि के पवित्र स्वर से झंकृत साहित्य की निर्मल धारा में मानवता स्नान करती हुई सदैव निखरती रही है । आरंभिक साहित्यिक रचनाओं को कविता के रूप में देखा जा सकता है । आगे चलकर साहित्य वाङ्मय के रूप में विकसित हुई । मानव जाति के जीवनानुभव, चिंतन–मनन तथा आत्म–विश्लेषण से जो ज्ञानचक्षु खुलते हैं, उसे मौखिक या लिखित रूप में अभिव्यक्ति पाने के बाद साहित्य के नाम से अभिहित किया जाता है । मानव जाति के द्वारा अक्षरों के उच्चारण सीखने में ही लाखों वर्ष लग गए । ध्वनियों को मौखिक से लिखित स्वरूप प्रदान करने में पुनः वर्षों लग गए । समस्त वैदिक साहित्य वनस्पति, जीव–जंतु एवं प्रकृति–पूजन से सम्बध्द है । साहित्य का सर्वोत्तम लक्षण उसकी शाश्वतता होती है । मानव सभ्यता के विकासक्रम में लगभग सभी देशकाल एवं भाषाओं में साहित्य की सर्जना हुई है । एक उत्तम साहित्य समाज की विकास गति को नियमित करने का कार्य करता है ।

मानव समाज की अभिवृध्दि में भारतीय साहित्य का अमूल्य योगदान रहा है, जो साहित्य युग धर्म से च्युत हो गया, निश्चित रूप से वह सुरसरि की गरिमा से च्युत होकर मानसूनी वर्षा की तरह ही अपना

महत्त्व रखता है । साहित्य की शाश्वतता देश, काल, समाज में प्रतिष्ठा पाने में है । साहित्य में नवजीवन के निर्माण की क्षमता होती है । साहित्य की यही मानवतापोषी रूप उसे कालजयी स्वरूप प्रदान करती है । रामायण, महाभारत, भगवतगीता, पुराण तथा उपनिषद् आदि सृष्टि की मंगल कामना के निहितार्थ सृजित साहित्य है ।

बीज शब्द:

सत्य, समाज, शिवत्व, युगधर्म, कालजयी, शाश्वतता, महाभारत, रामायण, ब्रह्माण्ड, विराट, कर्मयोग आदि ।

साहित्य की रचना समाज में होती है । रचनाकार समाज में रहकर अपने भावों को आकार देता है । समाज से विषय लेकर समाज के अंधकार को दूर करके उसे प्रकाशित करने का कार्य एक साहित्यकार ही करता है । साहित्यकार व्यक्ति ही नहीं, अपितु समाज का भी मूल्य निर्धारित करता है । समाज के निर्माता की भूमिका में साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान होता है । परिष्कृत समाज में साहित्य सर्जना की नींव पड़ती है । क्योंकि साहित्य यदि सबके हित साधन का कारक होता है, तो साथ ही साहित्य की समझ रखने वाला मानवीय समाज ही साहित्य सर्जना का कारक होता है । क्योंकि साहित्य सबके हित को तभी साध सकता है जबकि साहित्यकार की बात को सामाजिक समझने की दृष्टि रखें । मध्ययुगीन हिंदी साहित्य में जब कबीर अपनी मानववादी दृष्टि को गला फाड़–फाड़ कर व्यक्त कर रहे थे, तो तद्युगीन सामाजिक उनके मंतव्य को समझ पाने में पूर्णतः सक्षम न थे । हमारे देश के स्वतंत्रता संग्राम में जिस समय चहुँ ओर भारतवासी देश की स्वतंत्रता के लिए आंदोलनरत थे, उसी समय साहित्यकारों ने कलम युध्द छेड़ दिया था । कलम का प्रभाव ही था कि कलमकार अपने चेतनामयी लेखन–शक्ति के फलस्वरूप बार–बार कारावास की सजा भुगत रहे थे । गरम दल और नरम दल के साथ ही कलम दल देश की आजादी के लिए प्रतिबध्द थे । यहाँ साहित्य किसी यशलिप्सा अथवा धनलिप्सा का परिचायक न होकर औदात्य की पराकाष्ठा को छूने के लिए व्यग्र था । साहित्यकारों के लिए अक्षर ही अस्त्र–शस्त्र बने हुए थे । जिसका प्रयोग साहित्यकार देश की स्वतंत्रता के निमित्त बड़ी सावधानीपूर्वक कर रहे थे । जितने भी महान साहित्यकार विश्व भर में हुए हैं, उनके मन में परपीड़ा की कसक अवश्य रही होगी । भारतीय साहित्य की मौलिक उद्भावना वेद, पुराण, रामायण, गीता , महाभारत, नीतिग्रंथ आदि के द्वारा प्रवाहमान हुई है । साहित्य की यह अविरल धारा सहस्रों वर्षों से मानवतावादी विचारों की गाथा बनकर बहती रही । ध्वनिमय सृष्टि के संधान से साहित्य–सर्जना की गति निरंतरता की ओर उन्मुख होती है । आचार्य

निशांतकेतु ने मनुष्य के द्वारा ध्वनि के निर्माण के सन्दर्भ में बड़ी सटीक व्याख्या की है । "मनुष्य ने मानवेतर पशु–पक्षियों को बोलते हुए देखा–सुना और उसका दीर्घकालिक अनुसरण भी किया है । इस अनुकरणधर्मिता के कारण मनुष्य ने ध्वनि के सम्पूर्ण उच्चार्यमाण अक्षरों को आविष्कृत कर लिया है ।"[1]

साहित्य का पहला स्वरूप वाचिक रुप में समस्त संसार में प्राप्त होता है । किन्तु जब हम साहित्य की विवेचना की ओर अग्रसर होते हैं, तो हमें लिखित साहित्य की ओर ही दृष्टि डालनी पड़ती है । पश्चिमी विद्वान् स्काट जेम्स ने साहित्य के संदर्भ में कहा है "Literature is the comprehensive essence of the intellectual life of a nation साहित्य किसी राष्ट्र के बौध्दिक जीवन का व्यापक सार है ।"[2] भारत की बहुभाषिक संस्कृति स्वयं में अपना एक वृहद् इतिहास समेटे हुए है । भारतीय भाषाओं के साहित्य की विशिष्टता उनकी अनूठी पहचान के रूप में सामने आती है । उत्तर भारतीय भाषाओं के पंजाबी, सिंधी, उर्दू और हिंदी के अलग–अलग साहित्य रचनागत विशेषता के कारण सर्वथा भिन्न हैं । इसी तरह से मराठी, गुजराती भाषा के साहित्य अपने जीवनगत विविधताओं के साथ उस भाषा के साहित्य में अभिव्यक्त हुए हैं । जब हम बांग्ला, असमिया तथा उड़िया साहित्य पर दृष्टिपात करते हैं, तो बांग्ला साहित्य की प्रखरता के बावजूद भी असमिया और उड़िया प्रचुर मात्रा में प्राप्त होते हैं । दक्षिण भारतीय चारों भाषाओं के साहित्य का उद्गम स्रोत एक होते हुए भी ये अपनी भाषिक, साहित्यिक विशिष्टता को अभिव्यक्त करते हैं । तमिल का 'संगम साहित्य' हो अथवा तेलुगु का 'अवधान साहित्य' समाज के मध्य से ही अपने विषय उठाते हैं । मलयालम की 'मणिप्रवालम' तथा 'किलिप्पाट्टू' शैली में 'सन्देश–काव्य' की रचना उसके भाषिक साहित्यिक अवदान को स्पष्ट करते हैं । गुजराती के 'आख्यान' एवं 'फागु', मराठी के 'पोवाड़े', असमिया के 'बरगीत' अथवा 'बुरंजी साहित्य', उर्दू के ग़ज़ल तथा पंजाबी के 'रम्याख्यान' तथा 'वीरगीत' आदि अपने मौलिक स्वरूप में सामाजिक अभिवृध्दि को पुष्ट करते हैं ।

साहित्यकार सोए हुए समाज को जगाने वाला समाज का सजग प्रहरी होता है । बिहारीलाल जैसे कवि ने अकर्मण्य राजा जयसिंह को अपनी काव्य पंक्तियों के द्वारा कर्मोंमुख कर दिया था । साहित्य को अति उच्चतम स्थान पर स्थापित करने वाले संस्कृत के आचार्य भर्तृहरि ने साहित्य, संगीत तथा कला विहीन मानव को पूँछ विहीन पशु के समान कहा है । समाज आज भी अपनी संस्कृति, विचार, परम्परादि का मार्गदर्शन साहित्य से प्राप्त करता है । "समाज की विविध प्रकार की गतिविधियों का ही साहित्य में अंकन किया जाता है । देश, जाति, राष्ट्र, समाज तथा विश्व की उन्नति में साहित्य महत्वपूर्ण साधन का कार्य करता है ।"[3]

यदि भारतीय साहित्यिक परिप्रेक्ष्य में साहित्य की बात आरंभ करते हैं, तो देखते हैं कि भारतीय वैदिक साहित्य का विषय मात्र भारतीय समाज ही नहीं, अपितु समस्त मानव समाज तथा उससे आगे बढ़ कर ब्रह्मांडीय अभिवृध्दि हेतु रचे गये हैं । सुभाषितानि, हितोपदेश, पंचतंत्र, रामायण तथा महाभारत तथा पुराण आदि साहित्य समाज के मध्य से सामाजिक विषयों को लेकर उसी समाज के कल्याण के निमित्त रचे गए हैं । हजारी प्रसाद द्विवेदी ने साहित्यकार के सामाजिक सरोकार को ध्यान में रखते हुए दिनकर को केंद्र में रखकर कहा है– "दिनकर' की उमंग और मस्ती में सामाजिक मंगलाकांक्षा का प्राधान्य है । 'हुंकार' में कवि सामाजिक विषमताओं से बुरी तरह आहत है । उसका मन व्यक्त रूप में मस्ती और मौज का उपासक है, शहर की चिंता में दुबले होने वालों से अलग रहना पसंद करता है । किन्तु उसके भीतर अव्यक्त और अलक्षित रूप से सामाजिक चेतना का वेग है । वह समाज की चिंता छोड़ नहीं पाता ।"[4]

साहित्य के माध्यम से सत्य के संधान कार्य को सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है । एक उच्चकोटि का साहित्य जीवन की सारी कुहाँसा को छाँटने में समर्थ होता है । साहित्य सामाजिक अभिवृध्दि में प्रत्येक देशकाल में सहायक रहा है । भगवतगीता का सृजन महाभारत युध्द आरम्भ होने से पूर्व हुआ था । युध्द से पूर्व जब अकर्मण्यता ने अर्जुन को घेर लिया था तथा वे अपने कर्म से दूर हट रहे थे, तो कर्म के विराट स्वरूप को महर्षि वेदव्यास के द्वारा साहित्यिक स्वरूप प्रदान किया गया था । 'साहित्य का आत्मसत्य' नामक कृति में निर्मल वर्मा का यह वाक्य यहाँ उल्लेख्य है– "जिस तरह अर्जुन अपनी 'मिनियेचर' दुनिया से उठकर हठात असंख्य सूर्यों, सृष्टियों, युगों से साक्षात् करता है और उस असाधारण अनुभव के परिप्रेक्ष्य में अपनी क्षुद्र पीड़ाओं और शंकाओं से मुक्ति पा लेता है, क्या हम ऐसा शेक्सपियर, तोल्स्तोय, और प्रूस्त के उपन्यासों में महसूस नहीं करते मानो घोर निविड़ में हमें कोई ऐसे सत्य का सूत्र मिल जाता है, जो भ्रांतियों के कुहरे को छाँट देता है और फिर हम इसी जीवन में एक नए अंतर्लोक की किरण पा लेते हैं ।"[5]

ऐसी बात नहीं है कि मात्र भारतीय साहित्य में ही सामाजिक अभिवृध्दि के प्रयत्न हुए हैं, अपितु विश्व साहित्य में भी इसकी भूमिका कमोवेश इसी प्रकार रही है । नेपोलियन के द्वारा यूरोप में जिस प्रकार की विध्वंसक स्थितियों को जन्म दिया गया, उसे वहाँ के साहित्यकार बीथोवन ने बड़ी प्रभविष्णुता के साथ अपनी कविता में प्रकट किया था । शाश्वत साहित्य मानवता के विकास के पोषक होते हैं । अतः साहित्यिक रचनाओं को वर्ग, क्षेत्र तथा काल के अनुसार समयबध्द नहीं कर सकते हैं । साहित्य का यही कालातीत स्वरूप उसके महत्त्व को सार्वजनिन बनाता है । यदि हम साहित्य की सृजनभूमि का वर्गीकरण

करेंगे, तो यह स्वतः स्पष्ट हो जाएगा कि 'महाभारत' में 'भगवतगीता' तथा श्रुतियों में पशु–पक्षी–प्रकृति चित्रण तथा मानव जीवन नियमन को अत्यंत सहजता के साथ प्रकट किया गया है । उपनिषदों में कहानी– कथाएँ हो अथवा यूरोपीय साहित्य में दांते के 'द डिवाइन कॉमेडी' तथा गोएटे की 'इलेक्टिव एफेनिटिज़' जैसी रचनाओं में समग्रता की भावना की ही अभिव्यक्ति हुई है । डॉ शुभदा वांजपे अपनी शोधात्मक कृति 'हिंदी साहित्य: एक दृष्टिकोण' में लिखती हैं– "अपने समाज, परिवेश और प्रकृति के बीच रहते हुए भी व्यक्ति समाज से निरपेक्ष और कटा हुआ है । ऐसा जीवन जीने वाले साहित्यकार की जब अपने समाज, परिवेश से आत्मीयता नहीं तो उनकी रचनाओं में मानव जीवन के विभिन्न चित्र और चरित्र, भाव और राग, जीवंत भाषा और शिल्प कहाँ से आये?"[6]

समाज के विकास क्रम में मानव की शक्ति सम्पन्नता जितनी बढ़ती गयी, उनके विकास–चरण के स्रोत उतने ही संदिग्ध एवं आभाहीन होते चले गए । वर्तमान मानव स्वयं निर्मित होने का दंभ भरता है, लेकिन मानव की अपूर्णता परस्पर निर्भरता का मार्ग प्रशस्त करती है । साहित्य की साधना में ही सामाजिक अभिवृध्दि की सिध्दि समाहित है । लोकनायक कवि तुलसीदास ने अपनी कृति 'रामचरित मानस' के बालकाण्ड में लिखा है– "कीरति भनिति भूति भलि सोई । सुरसरि सम सब कहँ हित होई ।"[7]

रामायण एवं महाभारत ऐसा साहित्यिक समुद्र है, जहाँ से समस्त भारतीय साहित्यिक नदियाँ निकलती हैं । रामायण में आदर्श की पराकाष्ठा है, तो मानव स्वभाव की समग्रता में विवेचना भी हुई है । देश ही नहीं विदेशों में भी रामायण में चित्रित उच्च मानवीय मूल्यों के दिग्दर्शन किए जा सकते हैं । पंचम वेद 'महाभारत' मानव जीवन के महाकाव्य के रूप में सामने आता है । देश, काल की सीमा से परे यह ग्रंथ सार्वदेशिक, सार्वकालिक तथा प्रासंगिकता की दृष्टि से आज भी अत्यंत महत्वपूर्ण है । ये साहित्य मनोरंजन के साथ ही मानव जाति को जीवन विकास की घुट्टी पिलाते हैं । मानव जीवन दृष्टि के विस्तार में इनका उल्लेखनीय योगदान रहा है । चार पुरुषार्थों की स्थापना में महाभारत का श्लाघनीय योगदान रहा है । जीवन के लिए उपयोगी धर्म, दर्शन तथा राजनीति आदि विषयों की जैसी शिक्षा इस कृति से मिलती है, वह अन्यत्र दुर्लभ है । 'भगवतगीता' में निहित निष्काम कर्मयोग सिध्दांत की जैसी व्याख्या की गयी है, उससे मानव को अपने सम्पूर्ण जीवन के सन्दर्भ में उठने वाले प्रश्नों के उत्तर मिल जाते हैं । 'कर्मयोग', 'ज्ञानयोग', 'भक्तियोग' की त्रिवेणी में मानव जब चाहे स्नान करके मोक्ष प्राप्ति हेतु स्वतंत्र है । 'पौराणिक रचनाओं में कल्पना का संसार इस तरह से बुना गया है कि उसमें मानव, प्रकृति तथा भूमंडल के विषय

स्वतः ही समाहित हो गए हैं । इन पौराणिक ग्रंथों में भारत के तीर्थ, व्रत ही नहीं बल्कि इतिहास, राजनीति और संस्कृति भी चित्रित किए गए हैं ।

यह बात सर्वविदित है कि भाषा मनुष्य को मनुष्य से जोड़ती है और साहित्य भावों के माध्यम से मानवता को प्रसारित करती है । साहित्य बुध्दि, विवेक के परिमार्जन के साथ ही संवेदनाओं को भी पुष्ट करता है । मानव जीवन के सम्पूर्ण प्रक्रम आनंद की प्राप्ति के लिए किए जाते हैं । जिस साहित्य में समाज का यथातथ्य वर्णन किया जाता है । परिवर्तन, परिवर्ध्दन और तात्कालिक स्थितियों के समर्थन में रचे गए साहित्य में से वही साहित्य शाश्वत बनता है, जो शिवत्व की भावना से आपूरित होता है । 'कला, कला के लिए' अथवा 'कला, समाज के लिए' जैसी विचारधाराओं में कला समाज के लिए ही विचार अमर होते हैं । केशवचंद्र की कृति 'रामचंद्रिका' और तुलसीदास के 'रामचरितमानस' का आधार ग्रंथ एक ही होने के बावजूद भी दोनों कृतियों की सामाजिक उपादेयता सर्वज्ञात है । सहस्र वर्षों पूर्व के भारतीय साहित्य में तात्कालिकता के वशीभूत होकर युध्दोन्मादी वातावरण में वीरता और श्रृंगार के भावों का पोषण होता रहा। समाज को देने के लिए साहित्य के पास बहुत कुछ होता है । साहित्य का विषय कल्पना, यथार्थ, आदर्श अथवा किसी भी विचारधारा से संबध्द हो, उससे समाज को कुछ न कुछ अवश्य मिलता है । श्यामाचरण दूबे के शब्दों में– "भारतीय समाज बहुत पुराना और अत्यधिक जटिल है । लगभग पाँच हज़ार वर्षों की अवधि इस समाज में समाहित है । इस लंबी अवधि में विभिन्न प्रजातीय लक्षणों वाले और विविध भाषा–परिवारों के अप्रवासियों की कई लहरें यहाँ आकर इसकी आबादी में घुलमिल गयीं और इस समाज की विविधता, समृध्दि और जीवंतता में अपना–अपना योगदान दिया ।"[8]

साहित्य को पढ़कर साहित्यिक रचना के समस्त स्वरूप को अनुभूत किया जा सकता है । क्योंकि साहित्यकार समाज का पहरेदार होता है । इसके साथ ही साहित्यकार अपने युगगत विचारधाराओं की गति का अवलोकन करते हुए युगीन समस्याओं को साधते हुए उसका समाधान भी प्रस्तुत करने का प्रयत्न करता है । विजयेंद्र स्नातक के शब्दों में– 'कवि या लेखक अपने समय का प्रतिनिधि होता है, उसे जैसा मानसिक खाद मिलता है, वैसी ही उसकी कृति होती है । वह अपने समय के वायुमंडल में घूमते हुए विचारों को मुखरित कर देता है ।"[9]

भारतीय साहित्य में सामाजिक समरसता की भावना कमोवेश सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य में दिखाई देती है । जीव–जंतु, वनस्पति, पशु–पक्षी तथा मानव कल्याण के निमित्त भारतीय साहित्य की भावधारा प्रवाहित होती रही है । साहित्य भारतीय हो अथवा विश्व का कोई भी साहित्य, वह शाश्वतता एवं

सार्वदेशिकता तथा सार्वकालिकता की सीमा में तभी पहुँचता है, जबकि उसमें सत्यम, शिवम तथा सुंदरम की भावना समाहित हो । उच्च मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठापना साहित्य रचना का परम लक्ष्य होता है और इस लक्ष्य की प्राप्ति ही उसकी रचनात्मक सार्थकता है ।

सन्दर्भ सूची :

1. निशांतकेतु, आचार्य, समकालीन हिंदी निबंध, पृष्ठ–56
2. सक्सेना,डॉ. भुवनेश्वरी चरण, आधुनिक हिंदी निबंध, पृष्ठ–14
3. सक्सेना,डॉ. भुवनेश्वरी चरण , आधुनिक हिंदी निबंध, पृष्ठ–15
4. द्विवेदी , हजारी प्रसाद , हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास, पृष्ठ– 251
5. वर्मा, निर्मल, साहित्य का आत्म–सत्य, पृष्ठ– 36
6. वांजपे,शुभदा ,डॉ., हिंदी साहित्य: एक दृष्टिकोण, पृष्ठ– 182
7. गोस्वामी तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड, चौपाई–5
8. दूबे, श्यामाचरण, भारतीय समाज , अनुवादक–वंदना मिश्र, पृष्ठ–1
9. स्नातक, विजयेंद्र, विचार के क्षण, पृष्ठ–13

‘सलाम’ कहानी में दलित विमर्श का चित्रण

डॉ. पोपट भावराव बिरारी
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
म. वि. प्र. समाज संचालित,
कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय त्र्यंबकेश्वर, जि. नासिक
ईमेल– popatbirari@gmail.com
मो. 9850391121

साहित्यकार साहित्य के माध्यम से सामाजिक भेदभाव की समस्या पर प्रकाश डालता है ओमप्रकाश वाल्मीकि की ‘सलाम’ यह लोकप्रिय कहानी है । इसमें दलित साहित्य की वेदना, विद्रोह हैं तो समकालीन ग्रामीण जीवन के सामाजिक परिवेश को इस कहानी में उभारा गया है । दलित कहानी लेखन परंपरा में सर्वप्रथम नाम ओमप्रकाश वाल्मीकि की ‘सलाम’ कहानी का आता है, यह हिंदी की सबसे चर्चित कहानी है । ओमप्रकाश वाल्मीकि हिंदी दलित साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर रहे हैं । हिंदी दलित साहित्य में वाल्मीकि की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है । उनकी रचनाएँ दलित जीवन के भोगे हुए यथार्थ के विविध पहलुओं से भरी पड़ी हैं ।

कहानीकार ओमप्रकाश वाल्मीकि ने कहानी के आरंभ में ही दलित समाज की बारात में शामिल लोगों को जो कष्ट उठाने का चित्रण किया है । बारातियों से बदतर दशा दूल्हे ‘हरीश’ और उसके दोस्त ‘कमल’ की हुई है । बहुत ज्यादा थके हुए होने के बावजूद उन्हें आराम से बैठकर पैर फैलाने एवं पीठ टिकाने भर के लिए जगह नहीं मिल रही है । यहाँ से व्यथा का सिलसिला शुरू होता है जो थमने का नाम ही नहीं लेता। सुबह होते ही ‘कमल’ को चाय की खोज में भटकना पड़ता है । गाँव में एक जगह चाय की दुकान तो मिल है जाती है, लेकिन वह दलितों का बाराती होने के उसे भी दलित समझा जाता है । ग्रामीण परिवेश में छुआछूत का पालन इस हद तक किया जाता है कि कहानी का चरित्र ‘कमल उपाध्याय’

भले ही ब्राह्मण बिरादरी से ताल्लुक रखता हो लेकिन वह चाय से भी वंचित रह जाता है क्योंकि वह चूहड़ों की बारात में शामिल हुआ था ।

कहानी के नायक 'हरीश' को भी जातिगत भेदभाव के दुःखद अनुभव से गुजरकर अपमानित होना पड़ता है । हरीश के इस करुण अनुभव से पाठकों को 'कमल' ही परिचित कराता है । इस घटना का स्थान 'कमल' का अपना घर ही है । इसके बाद कहानी का सबसे बड़ा प्रसंग आता है, जिसमें दलित जीवन की मूल संवेदना अभिव्यक्त होती है । वह प्रसंग है– "दलितों को शादी के बाद सवर्णों के दरवाजे पर 'सलाम' करने के रिवाज का सख्ती से पालन करने की मजबूरी यह रिवाज दलितों के सम्मान एवं स्वाभिमान पर चोट करता है और उनके आत्मविश्वास को कमजोर करता है ।"[1] कहानी में वह गाँव है जो पुरानी मान्यताओं, रूढ़ियों में फँसा हुआ है । वह आजादी के कई सालों बाद भी वर्णव्यवस्था की जड़वादी मानसिकता से उबर नहीं पाया है । गाँव की कुत्सित मानसिकता का पहला उदाहरण चायवाले बूढ़े आदमी के रूप में सामने आता है । पहले तो वह बूढ़ा कमल को चाय देने के लिए राजी हो जाता है, लेकिन जब उसे पता चलता है कि 'कमल' जुम्मन चुहड़ों का बाराती है यानी दलित है तब वह चाय देने से साफ इनकार कर देता है । चायवाला कहता है "ये पैसे सहर में जाके दिखाना। दो पैसे हो गए जेब में तो सारी दुनिया को सिर पे ठाये घूमो ... यह सहर नहीं गाँव है ... यहाँ चूहड़े– चमारों को मेरी दुकान में चाय ना मिलती ... कहीं और जाकर पियो।"[2] मसला यहीं खत्म नहीं होता है और इसमें अन्य लोग भी जुड़ जाते हैं, जिसमें 'रामपाल' पहलवान है जो गाँव के बल्लू रांघड का आदमी है । वह बूढ़े का पक्षधर बनकर खड़ा होता है और 'कमल' को धमकाता है "जा चुपचाप चला जा... वरना एक भी जिंदा वापस ना जा सकेगा, ना बो लौंडिया ही जा पाएगी।"[3] सदियों से दलित उत्पीड़न की घटनाएँ होती है । आज भी गाँव में दलित स्त्री और पुरुष दोनों भयभीत, उत्पीड़ित और असुरक्षित हैं । दलितों को हिंसा का शिकार बनाया जाता है ।

आजादी के कई सालों बाद भी दलितों की हालत में कोई अपेक्षित परिवर्तन नहीं आया है । आज भी दलितों को ही गंदगी साफ करने का काम करना पड़ता है । कहानी के नायक 'हरीश' के पिता नगरपालिका में सफाई कर्मचारी हैं । उसकी सासू माँ गाँव में कई परिवारों में साफ–सफाई का काम करती थी। यह दलित जीवन की वास्तविकता है । बात केवल दलितों के जन्म आधारित व्यवसाय तक ही सीमित नहीं है ।

'सलाम' कहानी में जातिवाद, छुआछूत के कई उदाहरण मिलते हैं । जैसे कि एक बुजुर्ग कमल को नया बाराती पाकर उसकी बिरादरी पूछता है । कमल को चायवाला बूढ़ा चूहड़े का बाराती होने से चाय देने से मना कर देता है । 'कमल' की माँ का हरीश की जाति जानकर उसके प्रति किया गया बर्ताव तो दिल दहला देनेवाला है । कहानी में 'कमल' और 'हरीश' बचपन से मित्र रहे हैं । एक दिन 'हरीश' 'कमल' के साथ उसके घर चला जाता है । 'कमल' की माँ दोनों को खाना परोसती है । दोनों खाना खाने बैठ जाते हैं । 'हरीश' पहला निवाला अपने मुख में रखने वाला होता है तभी 'कमल' की माँ उससे पूछती है कि तुम्हारे पिताजी क्या काम करते हैं । 'हरीश' बिना हिचकिचाहट के बता देता है कि वह नगरपालिका में सफाई कर्मचारी हैं । यह सुनकर कमल की माँ आग बबूला होकर 'कमल' को जोरदार थप्पड़ मारती है और कहती है "पता नहीं कहाँ–कहाँ से इन कंजड़ों को पकड़कर घर ले आता है । खबरदार जो आगे से किसी हरामी को दुबारा यहाँ लाया..."[4] माँ ने 'हरीश' को गालियाँ देकर भगा दिया और उसके जाने के बाद घर को दुबारा धोया एवं गंगाजल छिड़ककर जमीन को पवित्र किया। स्पष्ट है कि दलितों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है है ।

दलित जीवन के इन पहलुओं का विवेचन इस कहानी के परिप्रेक्ष्य में हम इस प्रकार कर रहे हैं । समाज में छोटे–बड़े तथा उच्च–निम्न का निर्णय आर्थिक पैमाने पर सुनिश्चित किया जाता है । दलित अपनी आजीविका के लिए ज्यादातर शारीरिक श्रम के काम करते हैं । वे साफ–सफाई से लेकर हर वह काम करते हैं, जिसे करने में दूसरे आदमी परहेज करते हैं । रात–दिन मेहनत करने के बावजूद दलितों की आर्थिक स्थिति में बदलाव नहीं आया है । आजादी के बाद भी कुछ गिने–चुने लोगों को छोड़कर दलितों की वही स्थिति बनी हुई है ।

'सलाम' कहानी दलितों की आर्थिक स्थिति को उजागर करते हुए उनके जीवन संघर्ष को प्रस्तुत करती है । कहानी में कई आर्थिक संदर्भ मिलते हैं, जो दलित जीवन की कठिनाइयों को रेखांकित करते हैं । कहानी में 'हरीश' को अपने छोटेपन का अहसास तब होता है, जब वह 'कमल' के घर जाता है । 'कमल' की माँ उसके पिताजी के काम के संदर्भ में पूछती है और यह जानकर उसे घर से बाहर गालियाँ देते हुए निकाल देती है कि उसके पिता नगरपालिका में सफाई कर्मचारी हैं । इस भेदभाव का कारण जितनी जातिवादी मानसिकता है, उतनी ही आर्थिक विषमता भी है । कहानी में दूसरा आर्थिक

संदर्भ तब आता है, जब हरीश को शादी के बाद रस्म के रूप में गाँव के रांघड़ों के घर 'सलाम' करने के लिए जाने को कहा जाता है । चूँकि 'हरीश' की सास गाँव में कई परिवारों में साफ–सफाई का काम करने के लिए जाती है । एक ओर 'हरीश' और उसके पिताजी इस बात से इनकार करते हैं, तो दूसरी ओर 'हरीश' का ससुर कहता है 'सलाम' पे तो जाना ही पड़ेगा। और फिर जल में रहकर मगरमच्छ से बैर रखना तो ठीक नहीं है । और इसी बहाने कपड़ा–लत्ता, बर्तन–भांडे भी नेग–दस्तूर में आ जाते हैं । कहीं न कहीं समाज की जड़ें अर्थ तत्व से ही तो जुड़ी हुई हैं ।

ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कहानी में दलितों की शैक्षिक स्थिति को भी संदर्भित किया है । कहानी का नायक 'हरीश' एक सुशिक्षित दलित युवक है और उसकी होनेवाली पत्नी ने भी दसवीं तक पढ़ाई पूरी की है । हरीश के पिताजी नगरपालिका में कर्मचारी हैं, जबकि उसके ससुर जुम्मन ऋषिकेश में सरकारी कर्मचारी हैं । दलित शिक्षा के साथ जुड़ रहे हैं और अपनी स्थिति में सुधार करने हेतु शिक्षा को महत्त्वपूर्ण माध्यम मान रहे हैं । प्रस्तुत कहानी में जमींदार बल्लू रांघड 'हरीश' के ससुर जुम्मन पर न केवल अपना हुकुम चलाता है, बल्कि उन्हें शिक्षा से दूर रहने की सख्त हिदायत देता है । दलित समाज पढ़–लिखकर आगे बढ़े और उनकी अधीनता से मुक्ति प्राप्त कर सके। यह सभी संदर्भ दलित जीवन में शिक्षा के बढ़ते महत्त्व को प्रतिपादित करते हैं । आधुनिक शिक्षा की प्राप्ति से दलितों के जीवनयापन का स्तर ऊँचा हो रहा है । आधुनिक शिक्षा के महत्त्व को दलित समाज भलीभांति समझ गये हैं । इसी शिक्षा के माध्यम से वे अपने जन्म आधारित कर्म से मुक्ति पाकर रोजगार के नये अवसर खोज रहे हैं । गाँव के जमींदार की गुलामी से आजादी प्राप्त कर रहे हैं ।

'सलाम' कहानी दलितों के सामाजिक बड़ी शिद्दत से उभारती है । प्रस्तुत कहानी में दलितों की सामाजिक–सांस्कृतिक स्थिति, वास्तविकता को विवाह प्रसंग के माध्यम से अभिव्यक्ति मिली है । कहानी का नायक 'हरीश' दलित है । उसकी शादी गाँव में हो रही थी। उसकी शादी में उसका मित्र 'कमल' भी शामिल हुआ है । चूहड़े की बारातियों के लिए जरूरी पानी, बिजली और जगह न मिलना गाँव में दलितों की सामाजिक दशा का परिचायक है । 'कमल' को दलित बाराती कहकर चाय से वंचित रखना भी गाँव में दलितों की वास्तविक स्थिति को रेखांकित करता है । 'हरीश' को छुआछूत के अनुभव से गुजरना पड़ता है । उसका यह अनुभव सामाजिक भेदभाव का मार्मिक उदाहरण है । ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'सलाम' कहानी की केंद्रीय संवेदना दलितों की सामाजिक सांस्कृतिक स्थिति से जुड़ी हुई है । इस कहानी में

दलित समाज द्वारा सदियों से निभाई जा रही 'सलाम' की रस्म का संवेदनशील चित्रण मिलता है । 'सलाम' की यह प्रथा ही कहानी के केंद्र में है, जिसे दलितों के पूर्वज बिना सहमति के चलाये जा रहे हैं । दामाद हो या नई–नवेली दुल्हन 'सलाम' के लिए घर–घर जाने का रिवाज है, जो पुरखों ने बनाया था । यह सभी संदर्भ दलितों के सांस्कृतिक जीवन की वास्तविकता रेखांकित करते हैं । कहानी में दलितों के सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन अनुभवों की सटीक अभिव्यक्ति मिलती है ।

प्रस्तुत कहानी का मुख्य चरित्र 'हरीश' है । वह एक पढ़ा–लिखा दलित युवक है । उसमें उचित– अनुचित का विवेक है इसीलिए वह 'सलाम' जैसी रस्म का विरोध करता है । "यह कहानी समाज में शिक्षित होकर पुरानी परंपराओं से लड़ने व मुक्त होने का संकेत दे रही है । जो शिक्षा से ही संभव है ।"[5] 'हरीश' में यह हिम्मत शिक्षा की बदौलत है । शिक्षा ही मनुष्य के बुनियादी विचारों में परिवर्तन लाती है और उसे पारंपरिक रिवाजों की समालोचना करने की शक्ति प्रदान करती है । 'सलाम' कहानी में दलित जीवन का मार्मिक चित्रण हुआ है ।

निष्कर्ष :–

व्यक्ति की पहचान जाति से होती है यह बहुत बड़ी सामाजिक समस्या हैं । दलितों को अपनी जाति के कारण कई जगह पर बदनाम होना पड़ता है । समाज जाति व्यवस्था, छुआछूत और बहिष्कार जैसी अमानवीय धारणाओं में अटका हुआ है । वर्तमान समय में भी दलित सुरक्षित नहीं है । उन्हें आंतकित रहकर जीवन यापन करना पड़ता है । गाँव की सामाजिक संरचना में दलितों की स्थिति चिंताजनक है । गाँव में दलितों को अपमानित और उत्पीड़ित होना पड़ता है ।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. संपा. डॉ. अरुण कुमार पाण्डेय, अस्मितामूलक विमर्श और हिंदी साहित्य, पृ.116
2. संपा. डॉ.सदानंद भोसले, साहित्य सौरभ, पृ.90
3. वही, पृ.92
4. वही, 93
5. संपा. जयप्रकाश कर्दम, ओमप्रकाश वाल्मीकि : व्यक्ति, विचार और सृजक, पृ.233

हरिशंकर परसाई के साहित्य में सामाजिक व्यंग्य–एक अध्ययन

अरुण विट्ठल कांबळे

शोध छात्र

शिवाजी विश्वविद्यालय कोल्हापूर, हिंदी विभाग

9421125357

Email – avbanpurikar@gmail.com

प्रस्तावना

व्यंग्य साहित्य की एक विधा है । यह विधा हरिशंकर परसाई जी ने साहित्य में बडे प्रभाव के साथ लाई है । यह विधा साहित्य में उपहास, मज़ाक से प्रभावित हो जाती है । यूरोप में डिवाइन कॉमेडी, दांते की लैटिन में लिखी किताब को मध्यकालीन व्यंग्य का महत्वपूर्ण कार्य माना गया है । तत्कालीन व्यवस्था का मज़ाक उड़ाकर लोगों को जागृत करना यह कार्य इस विधा के माध्यम से किया गया था । हिन्दी में हरिशंकर परसाई और श्रीलाल शुक्ल ने इस विधा के विविध आयाम दिए है । ऐसा माना जाता है की व्यंग्य 16वीं शताब्दी की शुरुआत में अंग्रेजी में आया था ।

आमतौर पर हास्य, विडम्बना, कटाक्ष, व्यंग्य, हाजिरजवाबी का मतलब अभिव्यक्ति का एक ऐसा तरीका है जिसका उद्देश्य मनोरंजन से समाज को जागृत कराना है । एक साहित्यिक कृति जो मानवीय बुराइयों और मूर्खताओं को उपहास या तिरस्कार के लिए प्रस्तुत करती है । इसका प्रयोग तीक्ष्ण बुद्धि, व्यंग्य या कटाक्ष का उपयोग व्यवस्था में दिखाई देने वाली बुराईयों या मूर्खता को उजागर करने के लिए किया जाता है । आम आदमी को व्यवस्था से झगडते समय जो परेशानियाँ होती है । उनको खुले तौर पर तो व्यक्त नहीं कर सकता, लेकिन इसी बात को वह व्यंग्य शैली के माध्यम से समाज के सामने बिना डरे ला सकता है । इस प्रकार आम आदमी भी व्यंग्य के माध्यम से व्यवस्था की आँखें खोलने में सफल हो सकता है और जब वह व्यवस्था की आँखें खोलता है तो उसके मन को सुकुन मिलता है । यही बात

साहित्य के तौर पर भ्रष्ट व्यवस्था की पोलखोल करने में उपयोगी है । इसलिए हरिशंकर परसाई जी के व्यंग्य साहित्य का अध्ययन करना महत्वपूर्ण बना है ।

हरिशंकर परसाई:

हरिशंकर परसाई का जन्म मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के जमानी गाँव में हुआ था । प्रारंभिक शिक्षा गाँव में होने के बाद उन्होंने नागपुर विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. किया । कुछ सालों तक उन्होने अध्यापन किया । सन 1947 से वे लेखन कार्य में जुट गए । जबलपुर से 'वसुधा' नामक साहित्यिक पत्रिका निकाली । वे अपने सामने एक तरफ स्वाधीन भारत की विकास–यात्रा को देख रहे थे । वहीं राजनीति और समाज के उस नैतिक पराभव से भी वे वाकिफ हो रहे थे जो स्वाधीनता पूर्व की उम्मीदों के विपरीत थी और एक नए खतरे के तौर पर सामने आ रही थी ।

हरिशंकर परसाई के व्यंग्य में सामाजिक भावना :

हरिशंकर परसाई हिंदी के पहले रचनाकार हैं जिन्होंने व्यंग्य को विधा का दर्जा दिलाया । व्यंग्य को हल्के–फुल्के मनोरंजन से समाज के व्यापक प्रश्नों से जोड़ा । उनकी व्यंग्य रचनाएँ हमारे मन में गुदगुदी के साथ सामाजिक वास्तविकताओं को भी सामने रखने में सक्षम है । राजनैतिक व्यवस्था में पिडीत हो रहे सामान्य जनता के मन को उन्होंने बहुत ही निकटता से पकड़कर व्यंग्य से जोड दिया है । सामाजिक समस्या के साथ परंपराओ को सामान्य लोगों के जीवन–मूल्यों से जोडने की उनकी एक अलग भाषा शैली नजर आती है । जिसमे अपनापन दिखाई देता है । "ठिठुरता हुआ गणतंत्र" की रचना हरिशंकर परसाई ने की है जो एक व्यंग्य शैली में लिखा है ।

आसपास की व्यवस्था में नजर आती खोखली राजनीतिक और सामाजिक स्थिती को हरिशंकर परसाई ने बहुत ही करीब से पकड़कर उन्हें अपने शब्दों की जाल में फँसाया है । उनकी रचनाओं से – 'ठिठुरता हुआ गणतंत्र', 'आवारा भीड़ के खतरे', 'एक गोभक्त से भेंट' – हमें व्यंगो की पहचान होती है ।

हरिशंकर परसाई कहते है, "सामाजिक अनुभव के बिना सच्चा और वास्तविक साहित्य लिखा ही नहीं जा सकता ।" सामाजिक बुराईयो के प्रति गहरा सरोकार रखने वाला ही लेखक सच्चा व्यंग्यकार हो सकता है और परसाई जी इसमें खरे उतरे है ।

हरिशंकर परसाई की रचनाओं को पढ़कर महसूस होता है कि हमारा समाज, जिसे आज हम क्रूर और उन्मादी का विशेषण देते हैं ।

हरिशंकर परसाई के लिखे कुछ व्यंगों को पढकर हमें पता चलता है की उनकी कलम की धार कैसे नुकीली है ।–

१) 'अगर चाहते हो कि कोई तुम्हें हमेशा याद रखे, तो उसके दिल में प्यार पैदा करने का झंझट न उठाओ । उसका कोई स्केंडल मुट्ठी में रखो । वह सपने में भी प्रेमिका के बाद तुम्हारा चेहरा देखेगा ।'

२) ' सफेदी की आड़ में हम बूढ़े वह सब कर सकते हैं, जिसे करने की तुम जवानों की भी हिम्मत नहीं होती । '

३) 'इस कौम की आदी ताकत लड़कियों की शादी करने में जा रही है । '

४) ' बेइज़्ज़ती में अगर दूसरे को भी शामिल कर लो तो आदी इज़्ज़त बच जाती है । '

५) 'जो कौम भूखी मारे जाने पर सिनेमा में जाकर बैठ जाये, वह अपने दिन कैसे बदलेगी?'

६) 'अमरीकी शासक हमले को सभ्यता का प्रसार कहते हैं. बम बरसते हैं तो मरने वाले सोचते हैं, सभ्यता बरस रही है ।'

७) 'जनता जब आर्थिक न्याय की माँग करती है, तब उसे किसी दूसरी चीज में उलझा देना चाहिए, नहीं तो वह खतरनाक हो जाती है । जनता कहती है हमारी माँग है महँगाई बंद हो, मुनाफाखोरी बंद हो, वेतन बढ़े, शोषण बंद हो, आर्थिक क्रांति की तरफ बढ़ती जनता को हम रास्ते में ही गाय के खूंटे से बांध देते हैं । यह आंदोलन जनता को उलझाए रखने के लिए है ।'

८) 'स्वतंत्रता–दिवस भी तो भरी बरसात में होता है, अंग्रेज बहुत चालाक हैं । भरी बरसात में स्वतंत्र करके चले गए । उस कपटी प्रेमी की तरह भागे, जो प्रेमिका का छाता भी ले जाए । वह बेचारी भीगती बस–स्टैंड जाती है, तो उसे प्रेमी की नहीं, छाता–चोर की याद सताती है । स्वतंत्रता–दिवस भीगता है और गणतंत्र–दिवस ठिठुरता है ।'

एक और उदाहरण से उनकी व्यंग्यता चिरंतर किस प्रकार है इसका पता चलता है । गाय पर हो रही राजनीति पर परसाई ने तब लिखा था– 'इस देश में गौरक्षा का जुलूस सात लाख का होता है, मनुष्य रक्षा का मुश्किल से एक लाख का । उन्होंने यह भी लिखा कि, 'अर्थशास्त्र जब धर्मशास्त्र के ऊपर चढ़ बैठता है तो गौरक्षा आंदोलन का नेता जूतों की दुकान खोल लेता है ।' आज के वक्त में तब के परसाई के इस व्यंग्य को समझने के बाद तो पता चलेगा कि तब के परसाई भारतीय समाज के सचमूच अरस्तु थे । शायद हरिशंकर परसाई उसी समय यह देख चुके थे कि आने वाले समय में भारत की दशा क्या और कैसी होगी।

उनका व्यंग्य संग्रह 'विकलांग श्रद्धा का दौर' के लिए 1982 में साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है ।

निष्कर्ष:

हरिशंकर परसाई हिंदी के महत्वपूर्ण व्यंग्यकार है । उन्होने अपने साहित्य में व्यंग्य का प्रयोग सामाजिक कलुष को मिटाने के लिये किया । उन्होंने अपने साहित्य में इंसान की मुक्ति और सामाजिक परिवर्तन का व्यंग्य से घनिष्ठ संबंध है इस बात को समाज के सामने रखा है । हरिशंकर परसाई ने व्यंग्य के माध्यम से समाज को आयना दिखाया है ।

सामाजिक विसंगतियो के प्रति गहरा सरोकार रखने वाला ही लेखक सच्चा व्यंग्यकार हो सकता है । हरीशंकर परसाई ने इसे प्रमाणित कर के दिखाया है । समाज के हर व्यंग्य की स्थिति पर उन्होंने प्रकाश डाला है ।

परसाई का साहित्य हमें ये मानने पर विवश कर देता है की व्यंग्य को समझने के लिए हमें कितना चैतन्य और मानवीय होना पड़ेगा जिन चीज़ों को हम ख्वाब की तरह भूलते जा रहे हैं । परसाई हमेशा एक मुस्कान के रूप में हम में ज़िंदा रहेंगे जो हमें खुद पर आएगी, और इस बात को याद कराएगी की बदलाव और सुधार की नीव हमें खुद पर रखनी होगी ।

परसाई का साहित्य पढ़ते हुए महसूस होता है कि वो तब जिन मुद्दों पर लिख रहे थे, आज भी हम उन्हीं मुद्दों से घिरे हैं और लगातार उन्हीं मुद्दों के दलदल में और अन्दर तक धंसते चले जा रहे हैं । परसाई को पढ़ते हुए हमें यह भी महसूस होता है की आज भी हमारे मन में जो स्वाभाविक प्रश्न उठते हैं जो हमारे भूतकाल, वर्तमानकाल और भविष्य से आज भी अभिन्न रूप से जुड़े हैं ।

संदर्भ:

1) इंटरनेट स्त्रोत

2) NEWS18 HINDI–AUGUST 22, 2019,

3) जनचौक –संस्कृति–समाज, शैलेंद्र चौहान, August 22, 2023 https://www.janchowk.com

प्रवासी हिंदी साहित्य और पत्रकारिता : अंतर्संबंध

सविता शं. कोल्हे
पीएच.डी, शोधार्थी
हिंदी अनुसंधान केंद्र
म.स.गा.महाविद्यालय, मालेगांव (नाशिक)
(सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे)
संपर्क – 8329428076
ई–मेल – sk.kolhe27@gmail.com

प्रो. डॉ. अनिता नेरे
विभागाध्यक्ष
महिलारत्न पुष्पाताई हीरे महिला महाविद्यालय,
मालेगांव कैम्प, जि. नासिक
संपर्क – 9404556342
ई–मेल – anitanere321@gmail.com

भूमिका :–

साहित्य की कड़ी में प्रवासी हिंदी साहित्य यह एक अध्याय जुड़ गया है. हालांकि इसकी शुरुआत 19 वीं सदी से मानी जाती है और इस बात के प्रमाण पत्रिकाओं में लिखित कथा–कहानियों से मिलते है । प्रेमचंद की 'यही मेरी मातृभूमि' (1908) तथा शूद्रा (1926) (चाँद पत्रिका) से प्रवासी साहित्य का आरम्भ माना जाता है । पत्रिकाओं में इन कहानियों का प्रस्तुतीकरण यानि प्रवासी साहित्य का जन्म है । इसलिए यह कहना बिलकुल भी गलत नहीं होगा की प्रवासी साहित्य और पत्रकारिता का संबध सदियों से चला आ रहा है । जब प्रवासी साहित्य की अवधारणा प्रकट भी नहीं हुई थी, तभी से पत्रकारिता ने ही इसे दुनिया के समक्ष लाने का काम किया है । वर्तमान में इसका स्वरूप अब विस्तार लें चूका है । इंटरनेट के मायाजाल ने पत्रकारिता और प्रवासी साहित्य दोनों को एक ही मंच पर लाने का बहुत तेजी से काम किया है ।

शुरूआती दौर में जब पत्रिकाओं के प्रकाशन का दौर बहुत काम था या कहें की न के बराबर था तब से ही पत्रकारिता ने प्रवासी भारतीयों की रचनाओं को समाचार–पत्रों में, पत्रिकाओं में प्रकाशन का अवसर प्रदान किया है । प्रवासी भारतीयों पर आधारित पत्र–पत्रिकाओं में कहानी–कथा, समाचार

प्रकशित होने लगे, तभी से यह दुनिया के समक्ष आने लगा और इसकी शुरुआत की लहरें तरंगती हुए अपने जड़ों को मजबूत करने में जुट गई । प्रवासी भारतीयों की स्थिति को सुधारने, उनके विचारों की प्रस्तुति के लिए या कहें उन्हें व्यक्त होने के लिए पत्रकारिता ने एक मंच के रूप में काम किया है । चूंकि पत्रकारिता ही एक ऐसा माध्यम था, जिसकी ताकद से कठिन परिस्थितियों से लड़ना संभव था । पत्रकारिता के माध्यम से ही दूसरे देशों में गए प्रवासी भारतीयों की स्थिति पर भारत में चर्चा होना संभव हुआ ।

इसी ताकद को पहचानकर फिजी, सूरीनाम, अमेरिका, इग्लैंड, मॉरिशस, मलेशिया, त्रिनिदाद आदि देशों में समाचार–पत्र एवं पत्रिकाओं के प्रकाशन का दौर शुरू हुआ । समाचार–पत्रों में प्रवासी भारतीयों पर आधारित खबरों का प्रकाशन का सिलसिला चला, वहीं पत्रिकाओं में प्रवासी भारतीयों की रचनाओं के प्रकाशन होने लगा । जिससे प्रवासी साहित्य की अवतारणा हुई और प्रवासी साहित्य यह विधा हिंदी साहित्य से जुड़ गया । वर्तमान में इसकी जडे अब मजबूत हुई है । भारत में प्रवासी भारतीयों पर आधारित विभिन्न रचनाओं के प्रकाशन के लिए विभिन्न पत्रिकाएँ निकल रहीं है । साथ ही विशेष स्थिति में विशेषांकों का भी प्रकाशन हो रहा है ।

विभिन्न देशों में पत्र–पत्रिकाएं और प्रवासी साहित्य

दक्षिण अफ्रीका में रहते महात्मा गाँधी ने प्रवासी भारतीयों की दयनीय अवस्था को देखते हुए और उनकी समस्याओं को हल करने तथा इस उपाययोजन के लिए या कहें इसे दुनिया के समक्ष लाने के लिए 'इन्डियन ओपिनियन' समाचार पत्र की शुरुआत की । इस समाचार पत्र का पहला अंक 4 जून, 1903 (पहले अंक पर यहीं तारीख है, पर बाजार में 6 जून, 1903 को पहुंचा ।) को निकला । 'इन्डियन ओपिनियन' में पूरी तरह से प्रवासी भारतीयों के हितों के लिए था उसमें उनकी दुर्दशा के प्रसंग थे, प्रतिकूल कानूनों की व्याख्या तथा विरोध था, प्रवासी भारतीयों की एकता तथा जागृति का सन्देश तथा उनके देश प्रेम की प्रशंसा थी ।"[1]

मॉरिशस में डॉक्टर मणिलाल 11 अक्टूबर, 1907 को आये । यहाँ आने के बाद उन्होंने प्रवासी भारतीयों के लिए कार्य करना प्रारंभ किया । प्रवासी भारतीयों के लिए उन्होंने 'हिंदुस्थानी' नामक पत्र का प्रकाशन 15 मार्च, 1909 से शुरू किया । इस पत्र के प्रथम पृष्ठ पर आदर्श वाक्य था, 'व्यक्ति की स्वतंत्रता ! मनुष्य का भाईचारा !! जातियों की समानता !!!' ।"[2] शुरुआत में इसका प्रकाशन अंग्रेजी–

गुजराती में होने लगा, बाद में यह अंग्रेजी–हिंदी में निकलना शुरू हुआ । इसका उद्देश्य भारतीय प्रजा में स्वाभिमान और आत्मविश्वास पैदा करना और उनके जीवन में तथा उनके विचारों में परिवर्तन एवं उनकी स्वतत्वों की रक्षा करना था । उसके बाद यहाँ पर१ 1 जून 1911 से 'आर्य पत्रिका' का निकलना शुरू हुआ ।"[3] पत्रिका में प्रवासी भारतीयों की रचनाएं प्रकशित होने लगी ।

इसके बाद 6 सितंबर, 1920 से 'मॉरिशस इन्डियन टाइम्स' दैनिक का प्रकाशन प्रारंभ हुआ । यह द्विभाषी दैनिक था यह भारतवंशियों के लिए दूसरा समाचार–पत्र था । यह राजनितिक पत्र था, यह अंग्रेजी–फ्रेंच और हिंदी में निकलता था ।"[4] मॉरिशस मित्र, आर्यवीर पत्रिका आदि पत्र–पत्रिकाओं के प्रकाशन का सिलसिला जारी रहा । इसके अलावा मॉरिशस में विश्व हिंदी सचिवालय से वर्ष 2008 से नियमित रूप से विश्व हिंदी समाचार यह एक त्रैमासिक पत्रिका निकलती है । इसमें विश्व के कोने–कोने से हिंदी प्रेमियों की रचनाएं होती है । विश्वभर के प्रवासी साहित्यकारों समेत हिंदी प्रेमियों की रचनाओं का इसमें स्थान दिया जाता ही । इस पत्रिका की विशेषता यह की, यह सिर्फ समाचार तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसमें हिंदी से जुड़े ज्वलंत मुद्दों पर आलेख भी होते है तथा विभिन्न मुद्दों एवं विषयो पर चर्चाएँ भी होती है । इसके अलावा विश्व हिंदी सचिवालय से 'विश्व हिंदी पत्रिका विशेषांक' का भी प्रकाशन होता है और यह वार्षिक है ।

प्रवासी साहित्य के विकास में इग्लैंड में अनेकों लेखकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है । यहाँ कविता, कहानी, नाटक तथा उपन्यास जैसे कई विधाओं में लिखा गया है । वर्ष 1951 में हरिवंश राय बच्चन के इग्लैंड में अध्ययन के लिए आने के समय सर्वप्रथम 'हिंदी परिषद् की स्थापना से प्रवासी भारतीयों के मन में अपनी भाषा, धर्म और संस्कृति के प्रति आकर्षण उत्पन्न हुआ और वहां नाटकों का मंचन हुआ तथा हिंदी में तीन पत्रिकाएँ प्रकाशित की गई थीं ।[5] इसी प्रेरणा से कई हिंदी समितियों की स्थापना यहाँ पर हुई । इसकी प्रेरणा से परिणामस्वरूप अब यहाँ से 'पुरवाई', 'प्रवासी टुडे', 'लन्दन टाइम्स' आदि प्रकाशित होते है ।

अमेरिका में भी हिंदी की पत्रिकाओं में 'विभोम स्वर', 'विश्व हिंदी जगत', 'विश्व विवेक', 'विज्ञान प्रकाश', 'बाल जगत' आदि मुख्य है । जिनमें प्रवासी साहित्य की कड़ी को और भी अधिक मजबूत करने की प्रयास किया है और यह प्रयास लगातार जारी है । डॉ. कमल किशोर गोयनका जी ने न्यूयार्क के

सम्मलेन में प्रवासी साहित्य के प्रतिनिधि रूप का परिचय देने के लिए 'साक्षात्कार' पत्रिका का संपादन किया, जिसका वहां पर लोकर्पण हुआ । इसके उपरान्त 'शब्दयोग, राजभाषा, मंजूषा, बुलंद प्रभा आदि पत्रिकाओं के अंकों का संपादन किया ।

कनाडा में विश्व हिंदी परिषद्, हिंदी साहित्य परिषद्, सद्भावना हिंदी साहित्यिक संस्था, नागरी प्रचारिणी सभा जैसी संस्थाएं हिंदी भाषा के विकास और प्रचार–प्रसार में निरंतर कार्यरत है । यहाँ से 'चेतन', वसुधा' जैसी स्तरीय पत्रिकाएँ प्रकाशित होती है ।"[6]

डॉ. कमल किशोर गोयनका जी ने सूरीनाम के विश्व हिंदी सम्मलेन में 'विश्व हिंदी रचना' के नाम से एक ग्रन्थ का संपादन किया जिसमें पहली बार हिंदी के प्रवासी साहित्य की एक झलक देने की कोशिश की । प्रवासी साहित्य और डॉ. कमल किशोर गोयनका जी का बहुत गहरा रिश्ता रहा है । उनके प्रयासों से ही कई पत्रिकाओं के प्रकाशन का दौर शुरू हुआ या कहें की प्रवासी साहित्य इस अध्याय को स्पष्ट करने तथा इसे स्वीकारने में उनका बहुत बड़ा योगदान है । हाल ही में उनसे हुई बातचीत में उन्होंने बताया कि वें छह बार मॉरिशस की धरती पर गए है, जिसमें उन्होंने प्रवासी साहित्य से जुड़े विभिन्न मुद्दों पर बातचीत की, उनकी रचनाओं को हिंदी साहित्य में स्थान दिया । प्रवासी साहित्यकारों से विचार–विमर्श किया एवं उनके लिए भारत में भी एक मंच उपलब्ध कराने का भी प्रयास किया ।

भोपाल में आयोजित 10 वें विश्व हिंदी सम्मलेन में 'प्रवासी साहित्य जोहान्सबर्ग से आगे' विदेश मंत्रालय द्वारा प्रकाशित हुआ । इसमें डॉ. कमल किशोर गोयनका जी का आलेख प्रवासी साहित्य: एक सर्वेक्षण', ने प्रवासी साहित्य के संदर्भ में बहुत विस्तार से जानकारी दी है । पत्रिकाओं में कथा, कहानी, साक्षात्कार, शोध आलेख, पुस्तक समीक्षा आदि के तरह प्रवासी साहित्य पर महत्वपूर्ण सामग्री प्रकाशित की जाती है । इसके अलावा मध्यप्रदेश के भोपाल प्रवासी भारतीयों की ई–मासिक पत्रिका 'गर्भनाल' का प्रकाशन किया जाता है । इस पत्रिका में दुनियाभर के हिंदी प्रेमियों के लिए रचनाएं प्रकाशित होती है । पत्रिका में हिंदी की दशा–दिशा के साथ–साथ प्रवासी भारतीयों पर आधारित या प्रवासी भारतीयों की रचनाओं को विशेष स्थान दिया जाता है । पत्रिका में मन की बात, डायरी, विचार–विमर्श, बातचीत, शोध आलेख, कहानी, हाइकू ऐसी विभिन्न विधाएं है ।

प्रवासी साहित्य एवं प्रवासी विशेषांकों का प्रकाशन

पत्र–पत्रिकाओं के अलावा प्रवासी साहित्य की अवधारणा को प्रस्तुत करने तथा इसकी लोकप्रियता व उनके साहित्य से परिचय कराने हेतु विभिन्न पत्रिकाएँ प्रवासी साहित्य पर विशेषांक भी प्रकाशित कराती रहती हैं । इस दिशा में 'वर्तमान साहित्य' ने प्रवासी महाविशेषांक निकालकर पहला कदम उठाया था ।[7] यह अंक अपने आप में विशिष्ट इसलिए था कि इसमें कई देशों के रचनाकारों के विभिन्न विधाओं में किये गए लेखन को न मात्र पहली बार एक मंच पर प्रस्तुत किया गया था वरन् उस लेखन की समीक्षा भी उपलब्ध थी । इसके बाद श्री तेजेंद्र शर्मा के अतिथि संपादकत्व में 'रचना समय' पत्रिका में प्रवासी कथा विशेषांक आया ।

अमेरिका के प्रतिनिधि हिंदी कथाकारों पर केन्द्रित 'शोध दिशा' का 'प्रवासी कथा विशेषांक' प्रकाशित हुआ ।"[8] इसके माध्यम से अमेरिका की हिंदी कहानी का एक अलग स्वरूप पाठकों के समक्ष आया । भारत में केन्द्रीय हिंदी निदेशालय की ओर से प्रकाशित 'प्रवासी जगत' पत्रिका के भी प्रवासी साहित्य पर विशेषांक है, जिसमें प्रवासी भारतीयों के विभिन्न मुद्दों, उनके विचारों को रखा गया है । भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, नई दिल्ली से साहित्य, कला एवं संस्कृति के रूप में 'गगनांचल' का प्रकाशन किया जाता है । वर्ष 2017 में जनवरी–अप्रैल अंक संयुक्तांक रूप में गिरमिटिया एवं अन्य प्रवासी साहित्य विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया है ।"[9] इसके अलावा वर्ष 2023 में फिजी में आयोजित विश्व हिंदी सम्मलेन में विशेषांक प्रस्तुत किया, जिसमें विश्व के कोने–कोने में हिंदी की स्थिति एवं अन्य विधाओं को लिया है । 'प्रवासी कहानी विशेषांक', इग्लैंड का समकालीन हिंदी साहित्य, 'विजयेन्द्र स्नातक विशेषांक आदि विशेषांकों में माध्यम से भी प्रवासी साहित्य पाठकों के समक्ष आ रहा है ।

निष्कर्ष : प्रवासी साहित्य भारत और भारत के बाहर प्रकाशन के दौर में आने के बाद प्रवासी साहित्य और पत्रकारिता का के बीच संबंध और अधिक दृढ़ होता गया । पत्र–पत्रिकाओं के प्रकाशन के बाद प्रवासी साहित्य दुनियाभर में उजागर होने लगा । प्रवासी भारतीयों के विभिन्न मुद्दों, विचारों, उनकी समस्याओं पर चर्चा–विमर्श होने लगे, तथा उनकी सुविधा हेतु भारत सरकार द्वारा गतिविधियाँ शुरू हुई । परिणामस्वरूप वर्तमान में भारत में प्रवासी साहित्य पर अध्ययन एवं अध्यापन का कार्य भी शुरू हुआ । साथ ही हिंदी सीखने के लिए भारत में आनेवाले प्रवासी भारतीयों तथा उनकी अगली पीढ़ी के लिए विशेष सुविधा देकर उन्हें हिंदी सीखने के लिए आर्थिक सहायता के साथ–साथ अन्य प्रोत्साहनपरक गतिविधियाँ भी

शुरू की गई । जिससे हिंदी साहित्य के साथ–साथ हिंदी प्रवासी साहित्य को भी लोकप्रियता मिलने लगी। आज प्रवासी भारतीयों की रचनाएं मूल भूमि पर प्रकशित पत्रिकाओं में प्रकाशित होने के साथ–साथ गंतव्य भूमि की पत्रिकाओं में स्थान पा रही है । उनकी रचनाओं के माध्यम से प्रवासी साहित्य की लोकप्रियता बढ़ रही है । प्रवासी साहित्यकार अपने देश के पत्र–पत्रिकाओं में साहित्य के माध्यम से जुड़ें हुए हैं तथा निरंतर प्रवासी हिंदी साहित्य के प्रति केन्द्रित प्रमुख पत्रिकाओं में अपनी सेवाएं प्रदान कर रहे हैं ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बहुवचन. अंक (अक्टूबर–दिसंबर 2019), पृ. 46.
2. बहुवचन, अंक (जुलाई–सितंबर 2018), पृ.106.
3. वहीं. पृ.107.
4. वहीं. पृ.107.
5. बहुवचन. अंक (अक्टूबर–दिसंबर 2019) पृ.65.
6. वहीं पृ. 228.
7. प्रवासी जगत. अंक (अप्रैल जून 2018) पृ.68
8. वहीं. पृ. 68
9. वहीं. पृ. 64

संत कविता की दार्शनिक पृष्ठभूमि

आलीना ख़लग़ाथ्यान (ARMENIA)
शोधार्थी, हिंदी विभाग, अंग्रेज़ी एवं विदेशी भाषा विश्वविद्यालय, हैदराबाद
मोबाईल: +918977167953
Whatsapp: +37493388635
ई–मेल: alinakhlghatyan25@gmail.com

शोध सारांश

दुनिया में अनेक दार्शनिक मत प्रचलित हैं, जो मूलतः उस ज्ञान, उस परम सत्य की खोज करते हैं, जिसे ब्रह्म कहलाते हैं । दर्शन के मूलाधार प्रश्न यही हुआ करता है कि मनुष्य क्यों पैदा हुआ है? इसके पीछे क्या उद्देश्य है एवं मनुष्य का ब्रह्माण्ड से किस तरह संबंध है? जिस प्रकार भारत में भाषाओं एवं संस्कृतियों का वैविध्य है, ठीक उसी प्रकार भारतीय धर्म और दार्शनिक मत भी बहुआयामी हैं । संभवत: दुनिया के किसी अन्य देश में दार्शनिक मतों के इतने विविध रूप देखने को नहीं मिलेंगे जितने भारत में विद्यमान हैं । सदियों से भारतीय दर्शन तथा धार्मिक रुझान ने सामाजिक जीवन के साथ–साथ साहित्यिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र को भी गहराई से प्रभावित किया है । निम्न आलेख का उद्देश्य है मध्यकालीन निर्गुण भक्ति काव्यधारा की संत कविता या ज्ञानाश्रय परंपरा की दार्शनिक पृष्ठभूमि को उजागर करना एवं संत कविता पर दार्शनिक मतों के प्रभाव को दृष्टिगोचर करने का प्रयास करना ।

बीज शब्द: संत कविता, दर्शन, अद्वैतवाद, माया, जीव, आत्मा।

मूल शोध

मनुष्य दुनिया के अन्य प्राणियों से सर्वप्रथम अपनी भाषा और चैतन्य से ही सर्वश्रेष्ठ माना जाता है । इसलिए स्वाभाविक है कि अपने अस्तित्व के आदिकाल से ही मनुष्य ऐसे प्रश्नों का उत्तर ढूंढने में स्वयं को डूबाता है, जैसे ईश्वर कौन है? क्या ईश्वर वास्तव में है या नहीं? यदि है, तो किस रूप में विद्यमान है और यदि नहीं है तो इस सृष्टि का निर्माता कौन है? ईश्वर और मनुष्य का संबंध किस प्रकार का है?

सहस्राब्दियों से ये प्रश्न अनेक दार्शनिकों, विद्वानों, चिंतकों, ऋषि–मुनियों के चित्त में उभरा हैं तथा उन्होंने अपने–अपने मतानुसार इनका उत्तर खोजने का प्रयास किया है एवं अपने तर्क में बद्ध करके उन विचारों को दर्शाया हैं । परंतु ऐसे भी नहीं कि हर मत सर्वसम्मति से अपनाया गया है । हर तर्क के साथ एक वितर्क भी प्रस्तुत हुआ है । हर दार्शनिक मत विवादास्पद हो गया है, जिसने अन्य दार्शनिकों को अपने तर्क के अनुसार विवेचन करने एवं नया दार्शनिक मत को स्थापित करने की चुनौती दी है । यही कारण है कि भारतवर्ष में हमें इतने सारे दार्शनिक मतों जैसे बौद्ध और जैन मत, अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, शुद्धाद्वैतवाद, द्वैताद्वैत आदि की विविधता दिखाई देती है, चाहे वह मत नास्तिक प्रवृत्ति के हों या आस्तिक ।

यहाँ प्रश्न यह खड़ा हो जाता है कि दार्शनिक मतों का संबंध साहित्य से कैसे होता है? क्या साहित्य अपनेआप में एक दर्शन है? दार्शनिक प्रवृत्तियों या मतों का साहित्य से परस्पर एवं घनिष्ठ संबंध है । जहाँ–जहाँ दार्शनिक मत का प्रतिपादन हो रहा है, वहाँ –वहाँ इसको सहज एवं सरल ढंग से लोगों और जनजातियों तक पहुँचाने का कर्तव्य साहित्य अपनी जिम्मेदारी में लेता है । यही कारण है कि साहित्य को विश्लेषित करने के रास्ते में हमें निश्चय ही इसके पीछे किसी न किसी दार्शनिक मत का प्रभाव अवश्य देखने को मिलता है ।

अद्वैत दर्शन

मध्यकाल में भारतीय लोगों का झुकाव ईश्वर भक्ति पर केंद्रित होने लगा, इसके पीछे विद्वानों की राय विवादास्पद है । कुछ विद्वानों, जैसे इतिहासकार और साहित्यकार हजारी प्रसाद द्विवेदी का यही मत था कि भक्ति का उदय द्रविड़ों से हुआ है । पाश्चात्य विद्वान जॉर्ज ग्रियर्सन ने भक्ति का विकास ईसाइयों के प्रभाव से माना।[i] इतिहासकार रामचंद्र शुक्ल के मतानुसार भारत में मुसलमानों के आक्रमण से एवं इसके पूर्व के युद्धों की स्थिति की वजह से ही भारत की निराश और हताश जनता में सहज रूप से ईश्वर की भक्ति में सांत्वना एवं मोक्ष पाने की प्रवृत्ति दिखने लगी।[i] [i] उल्लेखनीय है कि जितना वैविध्य भारत में हर चीजों में देखने को मिलता है, इससे भक्ति भी अछूती नहीं रही। मध्यकाल में भक्ति के कई भेद प्रचलित हुए, जैसे निर्गुण एवं निराकार ईश्वर की भक्ति, सगुण भक्ति, भक्ति जिसका आधार ज्ञान हो एवं भक्ति जहाँ ईश्वर के साथ जीव के मिलने और एक होने का मुख्य आधार प्रेम हो। इन सभी को दार्शनिक दृष्टि से विश्लेषित करने से ज्ञात होता है कि इनके पीछे एक महत्वपूर्ण बात भारतीय दार्शनिक मत है । भक्तिकाल

की ज्ञानाश्रयी शाखा के संत कवियों की रचनाओं को गहराई से विश्लेषित करने से हमारे सामने इसकी दार्शनिक पृष्ठभूमि सहज रूप से उभर आती है तथा जिन प्रवृत्तियों और विशेषताओं को संत कविताएँ प्रदर्शित करती हैं, उन्हें आसानी से या नैसर्गिक रूप से भारतीय अद्वैतवाद दर्शन में हम देख सकते हैं ।

अद्वैतवाद के शाब्दिक अर्थ को यदि विश्लेषित किया जाए तो कहा जा सकता है: जिसका दो नहीं, केवल एक ही है । जैसे ऊपर उल्लेख किया गया था, दार्शनिकों, ऋषियों की मुख्य साधना यही हुआ करती थी कि वे जीव और परमात्मा के संबंध को स्थापित करें एवं उस परम रास्ते को दर्शाने का प्रयास करें, जिसके माध्यम से जीव और आत्मा का मिलन हो पाए, जिससे जीव परमात्मा में फिर से विलीन हो सके। आठवीं शताब्दी के भारतीय महान दार्शनिकों में से आदि शंकराचार्य ने उस सत्य की खोज में अद्वैतवाद दार्शनिक मत का प्रतिपादन अपने 'शंकरभाष्य' पुस्तक में किया जो कि ब्रह्मसूत्र पर ही आधारित था । शंकराचार्य ने अपने मत को भारत के दो नास्तिक या अनीश्वरवादी बौद्ध एवं जैन मतों के विरोध में स्थापित किया। बौद्ध और जैन धर्म उस समय राजधर्म थे और मुख्यतः अहिंसा पर ही बल देते थे। राजधर्म होने के परिणामस्वरूप राजाओं ने सेना होने की आवश्यकता को नकार कर दिया। फलस्वरूप देश कमजोर बनने लगा और उसी समय शंकराचार्य पूरे देश को फिर एक ही सूत्र में बांधने एवं इसे मजबूत बनाने के लिए भारतीय सनातन धर्म का पुनरुत्थान करने का प्रयास करने लगे। इसीलिए कहा भी जाता है कि श्री शंकराचार्य से ही सनातन हिंदू धर्म को ज़िंदा रखने का काम आरंभ हो गया था ।

शंकराचार्य ने सनातन धर्म की प्रतिष्ठा के लिए भारत के चार क्षेत्रों में चार मठ स्थापित किए और उनकी ज़िम्मेदारी अपने चार प्रमुख शिष्यों को सोंप दी। उन्होंने ये चार मठ देश के उत्तर, दक्षिण, पूर्व एवं पश्चिम में स्थापित किए । इसके पीछे न केवल देश को मजबूत रखने की सोच थी, बल्कि पूरे देश में अपने मत को फैलाने का उद्देश्य भी निहित था ।

शंकराचार्य के अद्वैतवाद दार्शनिक मत का मुख्य बिंदु इसी में है कि उनके अनुसार ब्रह्म ही एकमात्र सत्ता है । यहाँ से ही उनके मत का नाम भी प्रकट होता है कि ब्रह्म केवल 'एक' ही है । उनके अनुसार वही ब्रह्म निर्गुण, निराकार, अद्वितीय और सर्वव्यापक है । उन्होंने ब्रह्म को ही सृष्टि का निर्माता माना है । शंकराचार्य के दार्शनिक मत में तीन महत्वपूर्ण तत्व उल्लेखनीय हैं । ये हैं जीव, आत्मा और माया। शंकराचार्य के अनुसार जीव और ब्रह्म यानी कि आत्मा एक ही तत्व है परन्तु अविद्या जिसे वह माया कहते हैं, इसके आवृत्ति होने के कारण जीव अपने को ब्रह्म से पृथक समझने लगता है । माया जो अज्ञान है, जो

अविद्या है, इसके नष्ट होने के बाद ही जीव ब्रह्म में विलीन हो जाता है, ब्रह्म में मिलता है । अर्थात उनमें कोई भी भेद नहीं रहता है ।

शंकराचार्य के अद्वैतवाद दर्शन के मूल आधारों में से एक "ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या"[iii] सूत्र है, जो ब्रह्मसूत्र में लिखा है । शंकराचार्य जगत को इसलिए मिथ्या माना है क्योंकि उनके अनुसार वह कुछ ही समय के लिए है, वह नाशवान है । जगत में व्याप्त सुख और संपत्ति सब माया है । माया ब्रह्म और जीव के बीच में आवरण है । यह जगत मिथ्या है । वह सत्य नहीं हो सकता क्योंकि नाशवान है । जबकि ईश्वर, जो आत्मा है, जो परम सत्ता है, वह सर्वव्यापक है, वह अनंत है, कभी खत्म नहीं होता। ब्रह्म अदृश्य है, अनंत है । शंकराचार्य के अद्वैत्वाद के अनुसार जीव अज्ञान के कारण ही ब्रह्म या आत्मा से दूर हो जाता है और स्वयं को भिन्न समझता है । परन्तु जिस समय जीव अविद्या या माया से मुक्त हो जाता है अर्थात् ज्ञान प्राप्त करता है उसी समय वह ब्रह्म हो जाता है । अद्वैत्वाद दर्शन की इस मुख्य विचारबिंदु को भक्तिकालीन ज्ञानाश्रयी संत कविताओं में प्रचुर मात्रा में देखा जा सकता है एवं यह भी कहा जा सकता है कि उन कविताओं में अद्वैतवाद दर्शन की मुख्य प्रवृत्तियाँ ही प्रतिपादित हो गयी हैं ।

संत कविताओं में अद्वैतवाद दर्शन

जहाँ–जहाँ शंकराचार्य के अद्वैतवाद दार्शनिक मत के मूलाधार ज्ञान और विद्या के माध्यम से ब्रह्म को पाने की बात की गई है, वहाँ–वहाँ हमें इस मत का प्रतिबिंब भक्तिकालीन साहित्य की निर्गुण ज्ञानाश्रयी शाखा के संत कवियों की रचनाओं में गोचर रूप से देखने को मिलता है । इस बात का प्रमाण भक्तिकाल की निर्गुण काव्यधारा के महान संत कवियों में से कबीर की रचनाओं में प्रचुर मात्रा में विद्यमान है । उनके अनेक दोहे, चौपाइयाँ इस बात को दोहराते हैं कि जीव और आत्मा एक ही तत्व हैं, परन्तु माया, जो कि अज्ञान, अविद्या का प्रतीक है, इसके कारण ही जीव और आत्मा एक दूसरे से अलग हो गए हैं और जीव स्वयं को ईश्वर से पृथक मानते हैं । जैसे संत कबीर ने निम्न उक्ति में बहुत ही सुंदर दर्शाया है–

जल में कुंभ, कुंभ में जल है भीतर बाहर पानी।
फूटा कुंभ जल जलहि समाना यह तत कहौ गियानी।।[iv]

यहाँ तीन मुख्य तत्व बिंबात्मक रूप से देखने को मिलते हैं । जहाँ कुंभ में जल एवं कुंभ से बाहर जल दोनों जीव और आत्मा को दर्शाते हैं और कुंभ वही माया है, जिसने उन दोनों के बीच एक दीवार खड़ी की है । वही कुंभ अज्ञान है, अविद्या है । कुंभ माया का प्रतीक है और जल जीव एवं आत्मा का

प्रतीक है । माया के बाहर और भीतर एक ही तत्व जल है जो जीव भी है और जो आत्मा भी है परंतु माया जो अज्ञान का रूप है उन दोनों को मिलने नहीं देती है । जब कुंभ टूट जाता है यानी अविद्या खत्म हो जाता है तथा जीव को ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है, केवल तब ही जीव परमात्मा से मिलता है और जीव को ईश्वर प्राप्ति हो जाती है ।

महाकवि कबीर के अन्य दोहे भी हैं, जिनसे उनका अद्वैतवाद दर्शन से प्रेरणा स्पष्ट रूप से ज्ञात होती है । जहाँ शंकराचार्य माया को पाप मानते हैं, जिसने परमात्मा और जीव को अलग कर दिया, वहाँ साहित्य में उस बात की प्रतिध्वनि कबीर की निम्न पंक्तियों में गूंज उठती है–

कबीर माया पापणीं, हरि सूँ करे हराम।
मुखि कड़ियाली कुमति की, कहण न देई राम।।[४]

अर्थात् कबीर माया को अपराधी मानते हैं जो मनुष्य के मुख को अज्ञान की कड़ियों में बंद कर उन्हें परमात्मा का नाम लेने से वंचित कर देता है, परमात्मा से जीव को अलग कर देता है । यहाँ निर्गुण संत कवि कबीर की रचनाओं में शंकराचार्य के दार्शनिक मत का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, दोनों माया को अविद्या, अज्ञान के प्रतीक दर्शाते हैं, जो जीव और आत्मा के बीच दुष्कर दीवार खड़ा कर देती है ।

संत कविताओं की अद्वैतवाद दार्शनिक आधार की दृष्टि से इन्हें मुख्यतः तीन स्तरों पर विश्लेषित किया जा सकता है । सर्वप्रथम जीव और आत्मा के एक ही तत्व होने की बात दृष्टिगोचर है, दूसरी बात माया की अज्ञानता का प्रतीक होना, जो जीव और आत्मा के बीच भेद पैदा करती है एवं तीसरी, आत्मा के निर्गुण एवं निराकार होने की बात की जाती है, जो एकमात्र सत्ता है, अनंत और अद्वितीय है । इन बिंदुओं को संत कवियों ने अपनी कविताओं में प्रतिपादित किया है ।

सभी संत कवियों ने निर्गुण भक्ति की उपासना की है, जो अद्वैतवाद की विशेषताओं में से एक है । महान संत कवि रविदास या रैदास का यह दोहा भी इसका प्रमाण है–

जो खुदा पच्छिम बसै तौ पूरब बसत है राम
रैदास सेवों जिह ठाकुर कूं तिह का ठांव न नाम।।[५]

कवि उस ईश्वर की आराधना करता है, जो सर्वव्यापक है, जिनका ना कोई निवास स्थान है, ना ही इनका कोई नाम है ।

संत कबीर ने भी ईश्वर के निर्गुण होने की बात अपने दोहे के माध्यम से व्यक्त की है । इनका मानना है कि ईश्वर का ना कोई मुख है, ना उनका कोई रूप और स्वरूप है–

जाके मुंह माथा नहीं, नाहीं रूप अरूप।
पुहुप बास तें पातरा, ऐसा तत्त अनूप।।[iii]

निर्गुण भक्ति संत कविताओं में अद्वैतवाद दार्शनिक मत के आधार बिंदुओं में से आत्मा एवं जीव के एक होने का भाव व्यापक रूप से देखने को मिलता है । यह अपनेआप कविताओं में सामाजिक समत्व एवं बंधुत्व के महत्वपूर्ण विमर्श को भी रेखांकित करता है । अद्वैतवाद के दार्शनिक मत से प्रेरित संत कवियों ने ब्रह्म को सृष्टि निर्माता के रूप में माना एवं यह विशेष रूप से दर्शाया कि जीव और आत्मा एक ही तत्व हैं । फलस्वरूप यह समाज में जाति–पांति का विरोध भी कर रहा है एवं इसके साथ–साथ जो समाज में व्याप्त कुरीतियाँ एवं रूढ़ियाँ हैं, उनको भी नकारकर समाज सुधारने की चेष्टा कर रहा है । समन्वयवादी और मानवतावादी दृष्टिकोण से प्रेरित संत कवि कबीर खूब कहते हैं–

जाति पाति पूछे नहीं कोई।
हरि को भजै सो हरि कौ होई।।[iii]

इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि आठवीं शताब्दी के दार्शनिक शंकराचार्य के अद्वैत्वाद मत ने अपने साहित्यिक उत्थान को निर्गुण भक्ति संत कवियों की रचनाओं में पाया तथा इसके साथ–साथ समाजवादी एवं कल्याणकारी दृष्टिकोण को अपनाया। जहाँ–जहाँ जीव एवं आत्मा के बीच अभेद्य की बात की जाती है, वहाँ किसी के उच्च–नीच होने का प्रश्न भी नहीं खड़ा किया जा सकता है । हिंदी साहित्य में भक्ति काल की निर्गुण ज्ञानाश्रयी संत कविताओं का अनोखा स्थान है । इन कविताओं ने न केवल हिंदी साहित्य को एक नई उच्च कोटि पर पहुँचाया है, बल्कि अपने दार्शनिक आधार के साथ–साथ जनता की मानसिकता को उन्मुक्त करने एवं सुधारने हेतु प्रेरित किया, जो कि साहित्य का सबसे महत्वपूर्ण कर्तव्य है ।

निष्कर्ष

मनुष्य अपने अस्तित्व के आदिकाल से लेकर सत्य की खोज में ऐसे विचारों को प्रकट करता है, जिन्हें हम दर्शन में ही समाहित करते हैं । उन्हीं दार्शनिक मतों को सृजनात्मक रूप से कवियों, लेखकों ने

साहित्य के माध्यम से प्रसारित किया है । साहित्य एवं दर्शन आपस में मज़बूती से जुड़े हुए हैं । साहित्य में समाज एवं जनता के जीवन का हर अंग प्रतिबिंबित होता हैं ।

भारतीय अद्वैत दर्शन एवं हिन्दू सनातन धर्म की पुनर्स्थापना में आदि शंकराचार्य का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है । उन्होंने अद्वैतवाद दार्शनिक मत को प्रतिपादित करके लोगों के ध्यान को इस दिशा में केंद्रित किया कि ज्ञान के माध्यम से जीव ईश्वर में विलीन हो सकता है । शंकराचार्य के जीव और आत्मा के एक होने के सिद्धांत ने यह दर्शाया कि जीव को ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है और इसके लिए ज्ञान एवं विद्या की आवश्यकता है । इस सिद्धांत को मध्यकाल की निर्गुण भक्ति धारा के ज्ञानाश्रयी संत कवियों ने सृजनात्मक ढंग से अपनी रचनाओं में प्रतिपादित करके जनता को ईश्वर की ओर लाने एवं जाति–पांति जैसे कुरीतियों को समाज से दूर करने का सर्वोत्तम प्रयास किया है ।

अद्वैत दर्शन एवं इससे प्रभावित निर्गुण संत साहित्य ने मनुष्य के चित्त को उन्मुक्त कर समाज को एक नूतन सोच और आराध्य प्रदान किया है ।

संदर्भ:

[i] . विश्वकुमार मिश्र, भक्तिकाव्य और लोकजीवन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2013, पृ. 26–27

[ii] . रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009, पृ. 39

[iii] . विद्यासागर उपाध्याय, आदि शंकराचार्य: विराट व्यक्तित्व एवं अद्वैत दर्शन, बुक्सक्लिनिक पब्लिशिंग, छत्तीसगढ़, इंडिया, 2023, पृ. Xii

[iv] . हरिमोहन प्रसाद, महान संत कवि, होमेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2016, पृ. 39

[v] . रामकिशोर शर्मा, कबीर ग्रंथावली (सटीक), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2008, पृ . 202

[vi] . विजय कुमार त्रिशरण, महाकवि रविदास समाज चेतना के अग्रदूत, गौतम बुक सेन्टर, दिल्ली, 2008, पृ. 86

[vii] . प्रदीप प्रताप, भक्ति कालीन काव्य परंपरा, अभय पब्लिकेशन, दिल्ली, 2015, पृ. 34

[viii] . प्रदीप प्रताप, भक्ति कालीन काव्य परंपरा, अभय पब्लिकेशन, दिल्ली, 2015, पृ. 11

नार्वे के प्रवासी हिंदी साहित्यकार प्रवीण झा और व माया भारती से साक्षात्कार

डॉ. रेखा जी

सहायक प्राध्यापक

लॉयला कॉलेज (ऑटोनोमस)

चेन्नई –600034

ई मेल –sagarrekhasps1984@gmail.Com

Whatsapp –9445600456

(क) प्रवीण झा जी से साक्षात्कार द्वारा पूछे गए प्रश्न

डॉ. रेखा जी.– सर, आपको हिंदी लेखन की प्रेरणा कहाँ से मिली ?

प्रवीण झा– हिंदी लेखन की प्रेरणा तो विद्यालय काल में शिवानी, नागार्जुन, रेणु आदि को पढ़ कर मिली होगी। उस समय कुछ कविताएँ लिखता था । लेकिन, विज्ञान और चिकित्सा शिक्षा के दौरान यह पूरी तरह बंद हो गया । जब ज़िंदगी कुछ रास्ते पर आ गयी, करियर और पूंजी की चिंता घट गयी, फिर ऐसे शौक बाहर आ गए । इसमें हमारी पीढ़ी के लेखक दिव्य प्रकाश दुबे के एक यूट्यूब वीडियो का योगदान है, जब मुझे लगा कि अंग्रेजी लोग और तकनीकी दुनिया के लोग भी हिंदी में लिख रहे हैं । अंग्रेजी में पहले लिखता रहता था, लेकिन जब हिंदी में लिखना शुरू किया तो कलम यूँ भागी कि अब तक पाँच–सात लाख शब्द तो छप कर आ गए । शायद वह सदा से सहज रहा होगा, मुझे ही भान नहीं था ।

डॉ. रेखा जी.– सर, आपके प्रिय हिंदी रचनाकार कौन हैं ?

प्रवीण झा– उषाकिरण खान, अलका सरावगी, नीलोत्पल मृणाल, अशोक कुमार पाण्डेय, प्रभात रंजन, और पुष्यमित्र ।

डॉ. रेखा जी.– सर, प्रवासी जीवन की कौन सी विशेषताएँ हैं?

प्रवीण झा – यह तो निर्भर करता है कि प्रवास कहाँ है । लेकिन, प्रवास एक दूसरी संस्कृति को जानने–समझने और जीने का जरिया है । जैसे जब कोई बिहार से कर्नाटक प्रवास करता है, तो उसे नयी भाषा (कन्नड़) सीख लेनी चाहिए । पहली विशेषता भाषा ही है, जिसे संस्कृति का प्रवेश–द्वार कहा जा सकता है । इसके अतिरिक्त हर स्थान की संस्कृति के कुछ ख़ास खान–पान, विधि–व्यवहार होते हैं, जिनसे जुड़ जाना चाहिए । प्रकृति भी भिन्न होती है, जो तीसरी विशेषता है । इसके अतिरिक्त कला, संगीत और अन्य चीजें प्रवास से जुड़े हैं ।

डॉ. रेखा जी.– सर, आपकी डायरी लेखन 'खुशहाली का पंचनामा' में नार्वे और भारतीय संस्कृति व सभ्यता का तालमेल देखने को मिलता है, इसका क्या राज़ है ?

प्रवीण झा – इसका राज यह है कि मानव मूलत: एक ही प्रवृत्ति का जीव है । चाहे रंग–रूप अलग हों, है तो होमो सैपियंस ही । सभी एक ही तरह के संघर्ष से जुड़े हैं, जो भले ही तुलना करने पर अलग नज़र आएँ । विकसित देशों और विकासशील देशों में जो फर्क दिखता है, वह सिर्फ़ सतही फर्क है ।

डॉ. रेखा जी.– सर, हिंदी पाठक वर्ग के लिए आपका क्या सन्देश है?

प्रवीण झा – हिंदी पाठक वर्ग को कथा से बाहर झांकने की ज़रूरत है, जिसे कथेतर (नॉन–फिक्शन) कहते हैं । जब तक हम इतिहास, कला, संस्कृति का अध्ययन नहीं करेंगे, तब तक कथाओं का फलक नहीं बढ़ेगा। दुनिया की सबसे मशहूर विधा जिसे थ्रिलर कहते हैं, वह सुरेंद्र मोहन पाठक के बाद रेंग रही है। उसे गंभीर साहित्य न मानने के कारण बड़े प्रकाशक छापते नहीं। लेकिन, पाठकों में रुचि जगाने का कार्य ऐसी विधाएँ करती है। पाठक अपने में इस तरह का लचीलापन लाएँ कि स्वयं को किसी खाँचे में न बाँधे, और खुल कर हर विधा पढ़ें ।

(ख) माया भारती जी से साक्षात्कार द्वारा पूछे गए प्रश्न

डॉ. रेखा जी.– मैडम, आपको नार्वे में रहते हुए हिंदी कविता लेखन की प्रेरणा किससे और कब मिली?

माया भारती – ईश्वर की कृपा से और सुरेशचन्द्र शुक्ल ने मेरा हौंसला बढ़ाया।

डॉ. रेखा जी.– मैडम, आपके प्रिय हिंदी साहित्यकार कौन हैं?

माया भारती – गोस्वामी तुलसीदास मुझे बहुत पसंद है। मुझे सुरेशचन्द्र शुक्ल जी की कविताएं भी अच्छी लगती है। कुमार विशवास भी कविता बहुत अच्छी पढ़ते हैं । अवधी गीत भी बहुत अच्छे लगते हैं ।

डॉ. रेखा जी.– मैडम, नार्वे में हिंदी भाषा एवं हिंदी कविता की क्या माँग है?

माया भारती – हम जो महसूस करते हैं लिख लेते हैं । जैसे भारत में है वैसे ही नॉर्वे में है. ज्यादा फर्क नहीं है। यहाँ भी वही सुख दुःख और वहां भी वही सुख दुःख।

डॉ. रेखा जी.– मैडम, नार्वे में रहते हुए आपको अपने वतन की याद आना स्वाभाविक ही है,इस पर अपने विचार बताइए।

माया भारती – वतन की याद आती है। पर मैं अपने परिवार में खुश रहती हूँ। कुछ भारतीय परिवारों से प्रतिदिन संपर्क रहता है, वह भी महिलायें. कभी वह हमारे घर आ जाती हैं । कभी हम उनके घर चले जाते हैं । फोन से भी भारत में अपने परिवार से संपर्क में हूँ। अब तो बात करते समय हम एक दूसरे को देख सकते हैं ।

डॉ. रेखा जी.– मैडम, आप नार्वे में रहते हुए हिंदी पाठकों के लिए क्या सन्देश देना चाहते हैं?

माया भारती– अपनी भाषा सभी को सीखनी चाहिए। बच्चों को भी अपनी भाषा सीखनी चाहिए। अपनी भाषा सीखने से हमारे बच्चे कीर्तन भजन और अपनी संस्कृति सीख सकते हैं. बच्चे जब भारत जाएंगे आसानी से अपने गाँव में अपने दादा–दादी और नाना–नानी से बातचीत अपनी भाषा में कर सकेंगे। भाषा हमको जोड़ती हैं ।

प्रेम की नवेली दास्तान

संदीप पांडे

प्रमोद अंतर्मुखी स्वभाव का लडका था । मौन मुस्कान या भौहों की सिकुड़न उसके खुशी या नाखुशी का दृष्टिगत पैमाना थी । गिने चुने दोस्तों के बीच उसकी उपस्थिति अक्सर मूक श्रोता की ही होती थी । कम बोलने के स्वभाव के कारण उसके माता पिता भी इस बात से अनभिज्ञ थे कि उनके बेटे मे कल्पनाशील अवलोकन शक्ति व लिखकर अभिव्यक्त करने की क्षमता का विकास हो रहा है । कहानी, उपन्यास पढ़ने के उसके शौक से परिचित उसके अभिभावक यह उसके समय गुजारने का साधन मात्र ही मानते थे । इसलिए उसके काफी जोर देने के बावजूद कला की जगह उसे वाणिज्य संकाय लेने के लिए मजबूर किया गया । आखिर सी.ए. पिता को वाणिज्य मे ही उसका सुनहरा भविष्य नज़र आ रहा था । एकाउटेंसी और बुक कीपिंग की मोटी किताब पढ़ने से समय बचा कर, वह अपनी पसंद की कविता, कहानी आदि पढने लिखने का समय निकाल ही लेता था । ग्यारहवी की अर्धवार्षिक परीक्षा में वो ठीक–ठाक नम्बर ले आया था इसलिए टीचर या अभिभावक में से कोई भी पढ़ाई के लिए टोका–टाकी नहीं करता था । इस बार विद्यालय की अंतर सदन कविता पाठ प्रतियोगिता मे उसका नाम लिख लिया गया था और उसको एक अच्छी कविता तैयार कर प्रस्तुत कर सुनाने के लिए आदेशित कर दिया गया था । हल्की घबराहट के बीच उसने स्वरचित कविता का जब गीत रूप मे पाठ किया, तो सबने दाँतो तले उँगली दबा ली । प्रतिद्वंदियों द्वारा भी काफी अच्छा पाठ किया गया था पर वो सब स्थापित कवियों की लोकप्रिय रचनाएँ थी जिन्हे पहले भी सुना जा चुका था । प्रमोद का पाठ खत्म होते ही कुछ पल की ख़ामोशी के बाद जब गगनभेदी करतल ध्वनि से इस्तकबाल हुआ तो उसकी आँखो से खुशियों के मोती टपक पडे । उसके जीवन का यह पहला ऐसा क्षण था । अचानक सबकी नज़रे उसके प्रति बदली–बदली सी प्रतीत होने लगी । अनजाने लोग भी उसके सामने से जब मुस्कुराते हुए निकलने लगे तो उसे कुछ अपने विशेष होने का सा अभास हुआ ।

अगले ही दिन लंच के समय मे एक सुंदर सी लड़की ने उसको हाय, बोला तो वो अचकचा सा गया । उसके मुँह से बस इतना निकला "जी" । उधर से आवाज आई मेरा नाम सुलेखा है और मै ग्यारहवीं आर्ट्स की स्टूडेंट हूँ । आप इतना अच्छा लिखते और गाते हैं पर आप पहले कभी नज़र नहीं आए?" "जी, मैंने पहली बार ही किसी प्रतियोगिता में हिस्सा लिया है ।" "आप तो पूरे कलाकार लगते हैं । आपने आर्ट्स विषय नहीं चुना?" वो फिर बिना कुछ बोले मुस्कुरा भर दिया । "अगले हफ्ते पेन्टिंग का कॉम्पिटिशन है । मैं भी उसमें हिस्सा ले रही हूँ । आप जरूर देखने आना ।" न जाने क्यों प्रमोद को इस आमंत्रण मे कुछ अपनापन सा लगा और उसने गर्दन हिलाकर सहमति व्यक्त कर दी ।

पेन्टिंग प्रतियोगिता वाले दिन वो लंच टाइम में डिस्प्ले रूम मे पहुँच गया । सुलेखा अपनी बनाई पेन्टिंग के पास ही खडी थी । उसकी चेहरे की चमक ने बता दिया कि वो उसका ही इंतजार कर रही थी । सफेद लिबास मे लिपटी कल्पना मे खोई तरुणी की नीले बैकग्राउंड के साथ चित्र अप्रतिम लग रहा था । कुछ मिनट तक अपलक निहारने के बाद उसके मुँह से वाह.. निकल पडी । सुलेखा भी उससे कुछ ऐसे ही प्रतिक्रिया की उम्मीद कर रही थी । प्रसन्न भाव से बोली "पूरे पंद्रह दिन की मेहनत है । प्रमोद खोया खोया अभी भी चित्र को निहार रहा था....

"खोई रही ख्याल में प्रीतम की आस में
राधा खुद बनी श्याम, श्याम की प्यास में"

अब वाह सुलेखा के मुँह से निकलना वाजिब था । हल्के बतियाते दोनों ने बाकी सब पेन्टिंग्स पर भी नज़र डाली । "तुम्हारा पहला स्थान पक्का है । दूसरों की पेन्टिंग का स्तर तुम्हारे आसपास भी नहीं है ।" प्रमोद की इस तारीफ से सुरेखा एकदम लजाती हुई मुस्कुरा उठी । फिर अटकते हुए बोली "तुम्हारा कॉमर्स पढने मे दिल लग जाता है क्या?" "लगा लेता हूँ" प्रमोद ने धीरे से कहा । "आर्ट्स क्यो नहीं जॉईन कर लेते ।" सुलेखा तपाक से बोली । "हाँ,, पर मेरे पापा नही मानते । उनको लगता है मेरा फ्यूचर कॉमर्स में ज्यादा सिक्योर रहेगा ।" "पर तुम्हारी काबलियत तो कला मे ज्यादा नज़र आती है । तुम खुल कर अपने पेरेंट्स से बात करोगे तो वो जरूर कन्विंस हो जाएगें और अभी तुम चेंज करोगे तो कोर्स कवर भी कर लोगे । शायद बाद मे पछताने से तुम बच जाओगे ।"

प्रमोद ने शाम को हिम्मत जुटा कर माँ को अपनी बात समझाई तो उन्होंने अपनी सहमति तो प्रकट कर दी पर पापा से स्वयं बात करने को कह दिया । पिता उसके अक्सर रात देर से ही घर पहुँचते

थे । माँ ने आते ही उसकी इच्छा के बारे मे पिता को बताया तो वो गुस्सा हो गए । आधे घंटे तक पिता–पुत्र में अपनी बात मनवाने का द्वंद्व चलता रहा पर सच्चे और दृढ़ मन की जीत हुई और अगले ही दिन प्रमोद कॉमर्स छोड आर्ट्स की क्लास में आत्मविश्वास की नई उर्जा के साथ बैठा था ।

अब उसका ज्यादातर समय सुलेखा के साथ ही बीतता था । सुलेखा उसे अब तक पढा दिए पाठ को समझाने मे मदद करती और वो अपनी नई रचनाओं से उसे आनंद सागर मे सराबोर कर देता । स्वाभिमान और आकर्षण की डोर से वो ऐसा बंध गए थे कि उनको स्वयं ऐसा नही लगता कि उनको मिले कुछ महीने ही हुए हैं । एक अनकहा सा प्रेम दोनों महसूस कर रहे थे । प्रमोद काव्य सृजन से तो सुलेखा रंगो से अपनी अनुभूतियो को अभिव्यक्त कर रही थी । प्रमोद की कलम अब प्रेम गीत के सिवाय कुछ नही लिख रही थी और सुलेखा की पेन्टिंग मे लाल रंग ही प्रधान रूप से मौजूद रहता । दोनों साथ मे बैठ अपने को महकते चमन मे हिंडोले खाते सा महसूस करते तो अकेलेपन मे उस अहसास के आनंद में सराबोर रहते । एक–दूसरे के सिवा और सबकी उपस्थिति उनके लिए नगण्य सी हो गई थी । क्लास के लेक्चर हो या घर पर अभिभावक की बाते, अवचेतन मे एक नशे की सी खुमारी बनी रहती थी । सच कहते हैं लोग 'प्रेम एक नशा है ।' ग्यारहवी की वार्षिक परिक्षाएँ पूर्ण हो गई थी और अब एक महीने की छुट्टियाँ थी । सुलेखा ने बिना माँगे ही उसे अपना मोबाइल नम्बर दे दिया और रोज शाम को सात बजे कॉल करने की हिदायत भी दे दी । "तुम मेरा नम्बर भी नोट कर लो और मुझे कभी भी कॉल कर सकती हो ।" दोनों विदा हो गए और अब फोन पर बातचीत कर हृदय मे उठती ज्वाला को शांत करने का उपक्रम करते ।

दस दिन यही सिलसिला चलता रहा और फिर एक दिन सुबह ही सुलेखा का फोन आया । "मेरे पापा का प्रमोशन के साथ गांधीनगर बैंक ब्रांच मे ट्रांसफर हो गया है । कल ही हम सब शिफ्ट हो रहे हैं । पता नही अब मुलाकात होगी भी या नही ।" प्रमोद के तो पैरो तले जमीन सरक गई । उसने ऐसी कोई कल्पना भी नही की थी । उसने तो सुलेखा से कभी उसके परिवार के बारे मे भी नही पूछा था । स्पाट रोड पर आनंदित गति से चलते वाहन मे अचानक जबरदस्त ब्रेक लग गया था और गाडी हिचकोले खाने लगी । दिमाग संज्ञा शून्य सा हो गया । सुलेखा के जाने से पहले एक बार मिलने तक की हिम्मत ना जुटा सका ।

दो दिन गुमसुम से बैठे निकल गए । उसने ठीक से खाना भी नही खाया । माँ उसके भावों को समझने का असफल प्रयास करती पर वो जैसे तैसे उन्हे टाल देता । अगले दिन शाम को सुलेखा का

फोन आया तो उसने तपाक से उठाया । उसके हैलो करने से पहले ही सुलेखा बोली "मेरे फोन का ही वेट कर रहे थे?" "हाँ" उसकी आवाज मे पीडा थी जिसे सुलेखा ने साफ तौर पर महसूस कर लिया था । "अरे हम दूर ही हुए है अलग नही । हमारी दोस्ती पक्की है, जिसे दूरियाँ कभी नही मिटा सकती । हम संपर्क मे बने रहेंगे और तुम वादा करो अपने सृजन कार्य को जरा भी विराम नही दोगे ।" सुलेखा की बातें उसे तपती दुपहरी मे शीतल जल वर्षा के माफिक लगी । गहरे बादलो मे छुपा चाँद फिर पूरी चमक के साथ आसमान को आलोकित करने लगा ।

बारहवी का नया सत्र शुरू हो चुका था । पढाई अपनी गति से आगे बढ रही थी । प्रमोद की कविता, कहानी अब पत्र पत्रिकाओ मे छपने लगे थे । शहर के कुछ एक कवि गोष्ठियों मे भी उसने शिरकत करना शुरू कर दिया था । लेखन की धार अब निरंतरता से पैनी होती जा रही थी । वो अपनी हर प्रकाशित रचना को सुलेखा के पास जरूर भेजता । सुलेखा भी अपनी पेन्टिंग की फोटो उसको भेज कर उसकी राय माँगती । दोनों का मूक प्रेम अब नए दौर से गुजर रहा था । एक–दूसरे के प्रेम सागर मे गोते लगाते अपने हुनर के भी प्रेम मे डूबते जा रहे थे । सुलेखा ने आनलाइन प्लेटफार्म में अपनी पेन्टिंग का स्टोर खोल लिया था जिससे उसे ठीक–ठाक कमाई होने लग गई थी । इधर प्रमोद की जेबखर्ची का इंतजाम भी उसका लेखन कार्य कर रहा था । पर उसके पिता भविष्य को लेकर अब भी आशंकित थे ।

दोनों ने बारहवी भी अच्छे नम्बर से उत्तीर्ण कर ली थी । सुलेखा ने बी.ए. फाईन आर्ट्स और प्रमोद ने बी.ए. हिन्दी लिटरेचर में प्रवेश ले लिया और साथ में साधक की तरह अपने फन को तराशने में अपने स्तर के प्रयास मे लीन रहे । एक–दूसरे के उत्साहवर्धन हेतु वो अपने भावों को शब्दों में पिरो कर इलेक्ट्रॉनिक चिट्ठी के माध्यम से भेजते रहते । प्रेम अब गहराई के उस स्तर तक डूब चुका था कि जंहाँ से बाहर निकलने के सारे रास्ते बंद हो जाते हैं । श्याम मे राधा और राधा मे श्याम नज़र आते हैं ।

ग्रेजुएशन भी पूरा हो चुका था सुलेखा पेन्टिंग से अच्छा पैसा कमाने लग चुकी थी । प्रमोद की भी दो पुस्तक प्रकाशित हो चुकी थी । आय अभी कम ही थी । पर अब वो कुछ फिल्मकारों के संपर्क में आ चुका था और उसके गीतों को फिल्म में शामिल करने की बात चल रही थी । जीवन की राह अब एक दिशा मे चलती प्रतीत हो रही थी । प्रमोद ने अब सुलेखा से मिलने की इच्छा जाहिर की ।

"रुखसार से जुल्फों को अपने हाथो से हटाने की चाहत है
सदियों से रुके जज्बात को सामने अजमाने की चाहत है ।"

सुलेखा भी अब थोडा बहुत लिखना सीख गई थी।

"बेक़रारी सदा ही प्रेमियों ने तोहफे मे पाई है ।
मिलने की धडी मुश्किलो से ही मिल पाई है ।"

प्रेम गहरे सागर मे गोते लगाता आनंदित भी था और बेकरार भी । कर्म यथार्थ की ज़मीन पर पल्लवित हो रहे थे और प्रेम कल्पना का नया संसार रच रहे थे ।

प्रमोद की तीन गीतों का फिल्म में शामिल करने का कॉन्ट्रैक्ट साईन हो गया था । अच्छे पैसे भी मिले और नाम ने प्रगति की कई सीढ़ियाँ एक साथ चढ ली थी । स्नातक की डिग्री हाथ मे आने से पहले प्रमोद और सुलेखा अर्थ की मजबूत कुर्सी पर विराजमान हो चुके थे । अब दोनों के माता पिता भी उनके भविष्य को लेकर आश्वस्त हो चुके थे । अपनी तीसरी किताब की पहली प्रति लेकर प्रमोद बिना बताए गांधीनगर पहुँच गया । सुलेखा को उसके घर के पास के रेस्टोरेंट मे मिलने के लिए कहा तो वो दौडी चली आई । इतने सालों के बिछोह के बाद तो मिलन में आत्मीय आलिंगन के सिवाय कुछ और कल्पना करना नामुमकिन है । दोनों सबकुछ भूलकर बस कुछ लम्हो तक एक–दूसरे में खो गए । बिछोह प्रेम को मजबूती देता है तो मिलन भावनाओं का सैलाब । घंटे भर एक–दूसरे से प्रेम भरी बातों से तृप्त हो सुलेखा ने उसे लौट जाने को कहा । प्रमोद ने उसके सामने शादी कर लेने का प्रस्ताव रखा तो सुलेखा ने उसे नकारते हुए कहा, "क्या शादी करना जरूरी है? शादी करके हम प्रेमी–प्रेमिका की जगह पति–पत्नी बन जाएगे और हमारे प्रेम की गहराई कम हो जाएगी । हम जीवन भर शादी किए बिना ऐसे ही रहेंगे । इस तरह हम अपने काम और एक–दूसरे से प्रेम के स्तर मे बढ़ोत्तरी ही करेंगे और जब मिलने का मन करेगा तो ऐसे ही घर या बाहर कहीं भी मिल सकते हैं ।" प्रमोद आज फिर निरूत्तर था । पर उसे अपनी सुलझी सुलेखा पर गर्व भी हो रहा था ।

साठ साल के प्रमोद और सुलेखा आज भी अपने कार्य और प्रेम भरे जीवन से प्रसन्न है । लैला–मजनू, शीरी– फरहाद जैसा अमर प्रेम ना सही पर दोनों ने प्रेम की नई दास्तान तो लिख ही दी थी ।

सबक

हरीश चन्द्र पाण्डे
हल्द्वानी
Mobile No 9458185726

नवंबर का महीना चल रहा था, और सर्दी अभी नहीं के बराबर ही थी । धूप में शायद बीस मिनट से ज्यादा देर नहीं हुए थे, पर सूरज की तीखी गर्मी से बाहर बैठे–बैठे मदन को कुछ बैचैनी सी महसूस हुई । वो भीतर चले आये, यों मदन की तबियत इधर कुछ दिनों से ढीली–ढाली सी चल रही थी । आज भीतर आ कर पत्नी से आग्रह किया कि, "दस बजे बाद डॉक्टर के पास चलेंगे, आज तो दिखा ही लेता हूँ ।" "हाँ, ठीक है, चलो, पर आज मुझमे भी खास ताकत नहीं है, इसलिए ऐसा करते हैं, बिस्कुट दूध का नाश्ता कर लेते हैं ।" कहकर पत्नी ने उनको खाली पेट खाने की गोली और पानी थमाया । "हाँ हाँ सही है कुछ भारी तो न खाया जा सकेगा और न पच सकेगा ।" ठीक दस बजे साठ साल के मदन जी दो घंटे बाद अपनी हमउम्र अर्धांगिनी के साथ रिक्शा पर सवार होकर चल दिए । "बाबूजी इधर वाली सड़क से ले चलूंगा, वो वाला रास्ता खुदा हुआ है ।" कहकर रिक्शा चालक ने जीवन बीमा दफ्तर की गली में रिक्शा मोड़ लिया ।

आज वो दोनों एक महीने बाद घर से निकले थे । बूढ़े शरीर पर शहर की ताजा हवा ने स्पर्श किया तो कुछ अच्छा सा लगा । लोग, गाड़ी, बैलगाड़ी सब उनके रिक्शे के बगल से गुजर रहे थे पर इस कोलाहल की सड़क पर भी वो अपने मन की कोई लोरी सुन रहे थे । अचानक तेज धूप उनके चेहरे से होती हुई पत्नी को तांबई करती आगे निकल गई । रोजाना बस एक कमरे की मद्धम रोशनी में जिससे हर समय बतियाना होता उसी पत्नी को आज बाहर सूरज की रोशनी में जरा गौर से देखा, बालों में सफेदी, भूरापन और रूखापन सा आ गया था । आँखों के ठीक नीचे से ही झुर्रियों ने अपना काम कर दिया था और गले तक बस झुर्रियों का ही साम्राज्य था । खैर हू–ब–हू यही हाल तो मदन का भी था । नजर के सामने जीवन बीमा की बिल्डिंग देखकर मदन को एक करंट सा लगा । एकाएक मदन का दिल मानो

किसी बच्चे सा हो बैठा, और अपने पिता याद आ गये । पचास साल पहले की बात होगी, यहीं पास में एक प्राइमरी स्कूल हुआ करता था, पिता. उसको स्कूल तक छोड़ कर यहाँ से दफ्तर चले जाते थे । वो देर तक पापा को देखा करता । दो साल बाद छोटी बहन भी साथ ही आने लगी थी । 'इतना समय जैसे पलक झपकते ही कहाँ गुजर गया, नहीं शायद उड़ गया ।' मदन ने अपने आप से कहा । पिता कैसे उसको अपना जीवन बीमा कहकर अक्सर गले लगा लेते थे । अपनी बहन को गिनती, पहाडे, कविता आदि सिखाते समय वो पापा की सराहना से कैसे फूल कर कुप्पा हो जाता था । मदन हमेशा एक मेहनती और मेधावी छात्र रहा और फिर एक दिन वो होनहार युवक मदन, पापा की नज़र में कुलदीपक मदन बना, वो प्रतियोगी परीक्षा पास करके भारतीय प्रशासनिक सेवा में भी आ गया । परिणाम सुना तो पिता भावुक हो गये और तब पिता अपने आँसू नहीं रोक पा रहे थे । पिता ने खुश होकर अपनी एकमात्र जायदाद यानी वो दो कमरे का छोटा सा मकान मदन के नाम कर दिया था । मदन के पिता की तो जैसे मुराद ही पूरी हो गई थी । तब परिवार में कोई इतने बड़े पद पर नहीं पहुँच सका था । मदन पिछले तीन साल की तैयारी के दौरान कितना लोभी और स्वार्थी हो गया था यह पिता की वत्सलता से सराबोर आँखों ने देखा ही नहीं । मदन को हर साल असफलता की हताशा में यह नौकरी सेवा नहीं बल्कि हरे नोटों का पहाड़ लगने लगी थी । सफल होने मे तीन साल लग गए थे और एक शानदार दुनिया में मदन डूबकी लगाना चाहता था । अब अपने ऐशो आराम का कुशल प्रबंधन करना है इसकी कल्पना में गुम मदन सब भूल गया कि उसकी दो साल छोटी बहन भी तो उस समय बस एक सामान्य शिक्षिका ही थी । बहन ने पिता की उदारता देखी पर तब वो सरल मन वाली बहन कुछ नहीं बोली थी, वो बस अपने भाई को ऊंचाई पर देखकर और प्रेम विवाह करके ही अत्यंत प्रसन्न थी । वो भी क्या दिन थे, कैसे दिन थे?'

वो सोच ही रहा था कि, "लीजिए, पहुँच गए ।" कहकर रिक्शा चालक ने ठहरे हुए रिक्शे और अपनी आवाज़ से उनके विचारो को भी ब्रेक लगा दिया । नोट गिनकर वो बोला, "अरे, अरे, बाबूजी, दस रुपये ज्यादा क्यों दे रहे हैं" वो तीस रुपये रखकर दस वापस लौटाने लगा तो वो बोले कि, "बेटा, आप मेहनत कर रहे हो ना यह बहुत लंबा रास्ता था । रखो बेटा !" बेटा शब्द की गर्माहट ने उसे गदगद कर दिया । "अगर, आप कहो तो इंतजार कर लेता हूँ वापस चलेंगे ।" "ना बेटा एक घंटे से ज्यादा लग जायेगा ।" उसे आशीर्वाद देकर वो दोनों क्लीनिक पहुँच गए और भली भाँति पूरा परामर्श लिया । मदन जी और पत्नी दोनों की ऑक्सीजन, शर्करा आदि सब कुछ बिल्कुल ठीक था बस मदन जी का ही रक्तचाप

सामान्य से कम निकला ।, "जब–जब भूख लगती है तो मनपसंद आहार लिया कीजिए ।" कहकर चिकित्सक ने मुस्कुराते हुए दोनों को कॉफी पिलाई । पिछले आठ बरस से यही उनके पारिवारिक चिकित्सक थे । कॉफी पीकर उनसे जरा हँस बोलकर वो दोनों लौट आये ।

घर पहुँच कर पत्नी बोली, "सच, यह बहुत अच्छा चिकित्सक है ।" "हाँ, बिलकुल सही. आठ बरस पहले इसी ने जीवन दान दिया है ।" कहकर मदन ने एक गिलास पानी पिया और आराम कुर्सी पर बैठ कर आठ बरस पहले का वो चौंका देने वाला घटनाक्रम याद करने लगे । उन दिनों मदन यहाँ नगर निगम में खास तौर पर बनाये गये, राज्य सरकार के औषधी सलाहकार के महत्वपूर्ण पद पर थे और उस दोपहर को वो संसद से शहर के किनारे की सौ बीघा जमीन पर औषधीय पौधों के उत्पादन आदि पर विचार करके कार से घर लौट रहे थे कि अचानक एक फोन आया जिसमें उनको कुछ सुनाया गया था । दरअसल उनकी एक गोपनीय बातचीत वायरल हो गई थी वो बेशकीमती दस बीघा जमीन पर औषधीय पौधों के नाम पर अपना हक जमाने की कोई खास मंत्रणा कर रहे थे । यह सुनकर वो सकते मे आ गये ।

मगर, ब्लैकमेल करने वाले ने राज छिपाने के बदले पूरे एक करोड़ रुपये की माँग की । वो कुछ कहते कि उसी समय फोन अचानक कट गया और अब तुरंत बहन का फोन आया कि, "मदन भैया, प्लीज सुनो, कुछ दिनों से पिता बहुत बीमार है, उनकी सर्जरी करानी है ।" बहन याचना कर रही थी, पर कठोर मदन ने मीटिंग का बहाना बनाकर बहन को साफ टाल दिया और अब वो उस ब्लैकमेलर को दोबारा फोन लगाकर बात करने की कोशिश में न जाने क्या हुआ कि वो अचानक ही बेहोश हो गया और कुछ समय बाद जब होश आया तो उसकी आँखों के सामने यही चिकित्सक खडे हो कर ड्राइवर से बातचीत कर रहे थे । अब जाकर मदन को पता लगा कि पिछले दो घंटे में बहुत कुछ हो गया है, "सर, रक्तचाप कम होने से आपको लंबी बेहोशी आ गई और किसी ने खबरिया चैनलों मे एक टेलीफोनिक बातचीत वायरल कर दी है ।" ड्राइवर से यह सुनकर एक और सदमा लगा, मदन ने उस समय अपनी शारीरिक अक्षमता तथा अपनी धन लोलुपता की कमजोरी को महसूस करते हुए हौले से गर्दन हिला दी । मदन का दिमाग बिलकुल सुन्न हो गया था । मदन को लगा कि किसी ने चाबुक मारकर उसे फुटपाथ पर पटक दिया था । उस पल के बाद उसकी जिंदगी में अनचाहा भूकंप आया । बस दो दिन लगे और मदन अपनी जिस–जिस पोजीशन और पावर पर इतराता था, उसमें क्या से क्या हो गया । मदन पस्त और पराजित सा पछताता रहता । नौकरी से निलंबित होने के बाद इस ब्लैकमेलर के फोन को गलत साबित

करने की कोशिश में और अदालतों के चक्कर लगाने मे बंगले, बगीचे, होटल सब बिक चुके थे और अंत में ले देकर यह दो कमरे का छोटा सा मकान बचा जो कभी पिता ने इस खुशी से मदन के नाम किया था, कि आई.ए.एस. बेटा अपनी बहन को भी मान देगा, पर हुआ क्या, मदन ने तो पिता की सेवा तक नहीं की, बहन जब पिता को अपने साथ ले गई तब भी मदन को झेंप नहीं हुई, कि बहन सीमित संसाधनों में क्या क्या करेगी। जबकि मदन के पास तो नौकरों की फौज खड़ी थी । मदन यह भी भूल गया था कि कैसे अपनी बीमार पत्नी की सेवा करते करते पिता ने अनथक रात और दिन बस काम ही किया । माँ दुनिया से चली गई, तो उसके बाद मदन ने बस एक बार कह दिया कि, "पापा यह सौतेली माँ तो बहुत गंदी होती है, आप मत लाना पापा ।" और यह सुनकर मदन को सीने से चिपटाकर पिता ने अकेले जीवन काट दिया, वो फिर जीवन भर अविवाहित ही रहे । मदन के आई. ए. एस. होने के बाद पिता कितनी बार उससे मिलने के लिए, गपशप के लिए फोन करते पर वो कैसे व्यस्त होने का असत्य भाषण करता और झूठ बोल देता । पापा उसके साथ बैठकर यादों की वादियों में टहलना और बहलना चाहते पर मदन तो पाषाण हो गया था । उधर मदन की पत्नी भी बस अपनी नौकरी और अपनी मित्र मण्डली में ही दिन-रात मगन थी और मदन तथा उसके पिता के बीच नहीं आती थी । उस दिन जब नौकरी, पद, प्रतिष्ठा और इज़्ज़त सब नीलाम हो गई, तब मदन को समझ मे आया कि कुदरत ने तो पहले ही आगाह कर दिया था जब मदन का इकलौता बेटा बाइस साल की उम्र में शिमला के अपने कॉलेज से एक विदेशी पर्यटक के साथ किसी प्रोजेक्ट का बहाना बनाकर सीधे जर्मनी गया और ऐसा गया कि कभी लौटा ही नहीं । आज उन पगडंडियाँ पर वापस लौटते हुए मदन को सब याद आ रहा था ।

मदन को अपनी हर हरकत याद आ रही थी । बहन को पिता की सेवा करते देखा तो बहन का उपकार मानने की जगह मदन की निर्लज़्ज़ता और बढने लगी । "बहन, तू तो पिता की पेंशन से अपनी जिंदगी में ऐश कर रही है ।" हँसकर, यह कहकर वो बहन को शर्मिंदा कर दिया करता । अपने बडे भाई के मुँह से ऐसे गलीच आरोप सुनकर वो सहम जाती पर जवाब नहीं दिया करती थी उल्टे वो एकदम खामोश हो जाती । जब पिता को यह पता लगा कि उनकी किडनी की पथरी का ऑपरेशन और सब दवा, दारू बेटी और दामाद ने अपने स्तर पर संभाले हुए हैं, तो पिता ने उसी समय, एक फैसला किया और मदन को बस कोई पराया मान लिया था । "एक विनती है मेरी, अब पुणे चलना है मैं इस शहर में नहीं रह सकता ।" वो जरा जिद करने लगे तो सवाल उठा कि, "यहाँ से इतनी दूर पुणे?" पर, पापा! वहाँ क्या

है?" "मैं जीवन बीमा की मजेदार कहानी सुनाता था तब एक परिचित ने प्रस्ताव दिया था कि जब चाहो यहाँ पुणे आ जाना आपको, आपकी कहानी पर, मनचाहा मानदेय देगें ।" यह पिता की शायद अंतिम इच्छा थी इसलिए पिता की सलाह पर बहन ने अपना स्थानांतरण पुणे करा लिया । बहन के पति एक होटल समूह में सहायक थे, उन्होंने भी पिता समान ससुर की इच्छा का सम्मान करते हुए पुणे में नया होटल समूह खोज कर वहाँ काम कर लिया । अब वहाँ पिता ने सेहत के दुरूस्त होते ही अपने उसी संपर्क से जानकारी लेकर, कहानी सुनाने वाले क्लब की सदस्यता ले ली । देखते ही देखते दो पीढी एक अलग-अलग धुन में थिरकने लगी । एक तरफ तो मदन बावन की आयु मे नौकरी गँवाकर साठ का होते होते बिलकुल अशक्त हो गया था वहीं तिरासी साल के उसके पिता की कभी इस चैनल तो कभी उस चैनल पर मजेदार कहानियाँ आती रहती । साक्षात्कार भी आते और जब वो बोलते तब मदन साफ सुनता था कि पिता अपनी इकलौती संतान के रूप में बस बेटी का ही परिचय कराया करते ।

मदन उनके जोश और जज्बे को देखता और स्क्रीन पर ही प्रणाम करता। आज तक के सारे दुर्व्यवहार, सब निर्णय और प्राथमिकता कैसे भी थे पर वो सौ फीसदी थे तो मदन के ही, फिर उनके कारण यह दिनचर्या कितनी भी हताश निराश करने वाली हो, दुविधा कितना भी हैरान कर रही हो, अब आने वाले जीवन का स्वागत करना ही है वो खुद को समझाता रहा । मदन जानता था कि उसके पास एक-दो विकल्प तो हर हाल मे है ही और चुनते समय अब उनमें से भी सबसे बेहतरीन ही चुनना है । अब तो खुद को भ्रम में रखते हुए जीना गलत होगा । अब कल से कुछ सेवा कार्य करना चाहिए ऐसी सेवा जो प्रचार रहित हो । यही प्रायश्चित होगा । आज उसके जैसे निर्लज्ज के साथ सब सही हो रहा था । मदन को अपने कर्मो का बिलकुल सही सबक मिला था ।

क्या मुश्किल इस जीने में?

संदीप पांडे 'शिष्य'
अजमेर

रोना – धोना, चीख – पुकार
सर पर दुख का ले अंबार
छोटा सा यह जीवन अपना
क्या रक्खा है खोने मे?

उसका बंगला खूब बडा है
कारें चमचम करती हैं ।
साईकिल पर पैडल की ताकत
क्या कम अपने सीने मे ?

दौलत शोहरत, शान ओ शौकत
नौकर चाकर, दसियो व्यंजन
दो रोटी भूख की खातिर
क्यों घर भरता कोने मे?

यह भी ले लूँ, वो भी पा लूँ
घर अपना गोदाम बना लूँ
कर बस अपने सुख की चाहत
क्यो दुःख भर दूं औरो में?

धरती यह हर जीव की माता

सबकी वो है पालनहारा
सबकी खुशी बसे मन में तो
क्यों हो मुश्किल जीने में?
"इति"